गुरु नानक देव जी
(सन् 1469–1539)

गुरु नानक जी का अवतार सन् 1469[1] में राय भूई की तलवंडी, जिसे अब ननकाणा साहिब नाम से जानते हैं और पश्चिमी पाकिस्तान के पंजाब प्रदेश में स्थित है, में हुआ। यह स्थान लाहौर से उत्तर–पश्चिम की ओर 55 मील की दूरी पर है। आपके पिता महता कालू जी एक पटवारी थे। गुरु जी की माता तष्ता जी थे और एक बड़ी बहन बीबी नानकी जी थे। गुरु जी के बचपन से ही बीबी नानकी जी ने इनमें ईश्वरीय नूर देख लिया था, पर यह भेद उन्होंनें किसी को नहीं बताया। बीबी नानकी जी गुरु जी के पहले शिष्य होने के रूप में जाने जाते हैं।

गुरु जी की स्कूली शिक्षा :

गुरु जी सात साल के थे कि गांव में पंडित गोपाल दास नाम के अध्यापक के पास पढ़ने के लिए भेजे गये। जैसा कि अक्सर होता है, अध्यापक ने गुरु जी को पैंती (गुरमुखी वर्णमाला) के एक अक्षर से सबक आरम्भ करवाया, पर वह हैरान रह गया जब गुरु जी ने उसे वर्ण माला के अक्षरों के अर्थ समझाने के लिए कहा। जब अध्यापक लाचार दिखाई दिया तो गुरु जी ने वर्णमाला के हर एक अक्षर का अर्थ लिखकर दिखाया। यह गुरु नानक जी द्वारा उच्चारित की गई पहली दिव्य बाणी थी।[2] इस वर्णमाला के अक्षरों के जरिये मानव–जीवन और अकाल पुरुख तथा उस अकाल पुरुख को जानने के मार्ग की एक गहरी सच्चाई–युक्त व्याख्या है। अध्यापक ने दिव्य गुरु के सम्मुख लज्जित–सा खड़े होकर अपना शीश झुकाया और उन्हें उनके पिता
के पास वापस ले जाकर कहा, "महता जी, आपका पुत्र एक अवतार है और कलयुग के सताये लोगों का कल्याण करने आया है। यह जगत–गुरु होगा। मैं इसे कुछ भी पढ़ाने के योग्य नहीं हूँ।"

कई लेखकों का विचार है कि गुरु जी पहले हिन्दू और मुसलमानों के स्कूलों में वेदों और कुरान सम्बन्धी शिक्षा लेने के लिए अलग–अलग भेजे गये थे और इन ग्रंथों से ज्ञान लेने के बाद ही उन्होंने अपने धर्म की शुरूआत की। मैलकम के अनुसार, गुरु नानक जी द्वारा यह सारा सांसारिक ज्ञान, पैगम्बर खिज़र से लिया गया बताया जाता है। कनिंघम लिखता है–"यह बात स्वीकार करने योग्य है कि गुरु नानक जी ने युवावस्था में हिन्दू और मुसलमानों, दोनों के प्रचलित मतों के सिद्धान्त से खुद को परिचित कर लिया था और कुरान तथा ब्राह्मण–शास्त्रों के सम्बन्ध में आम ज्ञान प्राप्त कर लिया था।"

ऐसा लगता है कि इतिहास के इन विद्वानों ने गुरु नानक जी की ईश्वरता के प्रधान मूल तत्व को नहीं समझा। गुरु जी जन्म से ही इलाही पदवी के मालिक थे और इसीलिए उनके उपदेश भी दिव्य थे। ये लेखक इस तथ्य से बहुत ही अनजान प्रतीत होते हैं कि गुरु नानक जी ईश्वरीय प्रकाश का साकार रूप थे। वे एक दिव्य जीव थे और उनके ईश्वरीय गुणों ने उनको मानव–जाति और इसके मतों से बहुत ऊपर रखा। इतिहासकार 'गुरु ज्योति' के भीतरी प्रकाश को अनुभव करने में असफल रहे हैं। दिव्य आत्मा, मनुष्य द्वारा बनाई गई संस्थाओं से नहीं सीखा करती। गुरु नानक जी दिव्य संदेश लेकर आये थे और जन्म से ही संसार के गुरु थे, जिन्होंने मनुष्य जाति को नेकी और सच की राह बताई। गुरु नानक जी की ईश्वरता संसार की संस्थाओं और शिक्षाओं से ऊपर थी। गुरु जी ने जो सन्देश इस संसार को दिया, वो उन्हें सीधा अकाल पुरुख से मिला था और वह स्वयं इसकी पुष्टि करते हैं :

"जैसी मैं आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी ज्ञान वे लालो।"[3]
(तिलंग महल्ला 1, पृष्ठ 722)

"ता मैं कहिया कहिण जा तुझै कहाया।"
(वडहंस महल्ला 1, पृष्ठ 566)

जनम–साखी में यह भी बताया गया है कि बहुत बार गुरु नानक जी अपने साथी मरदाना [4] से कहा करते थे, "मरदाना, रबाब बजा, दिव्य बाणी आ रही है।" यह इस तथ्य की पुष्टि करता है कि हिन्दू और मुस्लिम धार्मिक संस्थाओं से मिलने वाले ज्ञान का गुरु नानक जी को मिली दिव्य बाणी, जो उन्होंने संसार को दी, से कोई सम्बन्ध नहीं है। **यह कहना कि गुरु जी भिन्न–भिन्न संस्थाओं में ज्ञान प्राप्त करने के लिए गये, गुरु–पदवी की पवित्रता का खंडन करना है।**

जनेऊ की रस्म :

गुरु नानक नौ वर्ष के थे और हिन्दुओं की उच्च जातियों की प्रथा के अनुसार, इन्हें जनेऊ पहनने की रस्म पूरी करनी थी। इस रस्म के लिए इनके पिता ने बड़ी तैयारियाँ कीं। परिवार के पुरोहित हरदयाल ने धार्मिक मंत्र पढ़ने आरंभ किये और गुरु जी को जनेऊ पहनाने लगा, तो गुरु नानक ने जनेऊ पहनने से इनकार कर दिया। वहाँ बैठे सभी लोग हैरान रह गये। उन्होंने नानक जी को जनेऊ पहनने के लिए मनाने की हर प्रकार से कोशिश की, पर वे सफल न हुए। तब, गुरु जी ने इस 'शबद' का उच्चारण किया [5] :

"लख चोरिया लख जारिया लख कूड़ीया लख गालि।
लख ठगीयां पहिनामीआ राति दिनसु जीअ नालि।।
तगु कपाहहु कतीऐ बामणु वटे आइ।।
कुहि बकरा रिन्नि खाया सभु को आखै पाइ।।
होइ पुराणा सुटीऐ भी फिरि पाईयै होरु।।
नानक तगु न तुटई जे तगि होवै जोरु।।"
(आसा दी वार, महल्ला 1, पृष्ठ 471)

पुरोहित अति निराश होकर पूछने लगा, "फिर, नानक, तुम किस तरह का जनेऊ पहनना चाहोगे ?" नानक जी ने उत्तर दिया :

"दया कपाह संतोखु सूतु जतु गंढ़ी सतु वटु।।
ऐहु जनेऊ जीअ का हई त पांडे घतु।।
ना ऐहु तुटै न मलु लगै ना ऐहु जलै न जाइ।।
धन्नु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ।।
(आसा दी वार, श्लोक महल्ला 1, पृष्ठ 471)

काला नाग दिव्य गुरु की सेवा में :

जैसा कि गांवों में अक्सर होता है, पिता ने पुत्र नानक को चरागाह में भैंसें चराने के लिए भेजना आरंभ कर दिया। एक दिन जब गुरु जी भैंसें चरा रहे थे, वह एक वृक्ष के नीचे लेटकर सो गये और भैंसों ने साथ वाले खेतों में जाकर फसलें खराब कर दीं। जब खेतों के मालिक ने देखा तो वह क्रोधित हो उठा और उसने इलाके के चौधरी (हाकिम) राय बुलार के पास जाकर शिकायत कर दी। राय बुलार ने पिता और पुत्र को बुलाकर झगड़े का निपटारा करने के लिए कहा। गुरु जी ने सबको बताया कि खेतों का कुछ नहीं बिगड़ा, बल्कि ईश्वर ने उन फसलों पर मेहर बख़्शी है। राय बुलार ने अपने आदमियों को भेजकर खेत देखकर आने के लिए कहा। सभी हैरान रह गये जब उन्होंने वापस आकर बताया कि वहाँ कोई नुकसान नहीं हुआ, बल्कि फसलें तो दुगनी फली–फूली हैं। जिन खेतों में यह घटना घटित हुई, वहाँ अब 'क्यारा साहिब' नाम का गुरद्वारा है।

एक अन्य दिन गुरु जी भैंसें चराने ले गये और एक पेड़ की छाया में लेटकर सो गये। जैसे ही सूरज ऊपर उठा, छाया दूसरी तरफ हो गयी। तभी, एक काला नाग अपनी बिल में से बाहर आया और इलाही गुरु के चेहरे पर उसने अपने फन से छाया कर दी। तभी, राय बुलार अपने अर्दलियों के साथ वहाँ से गुजरा। जब उसने यह अजीब नज़ारा देखा तो उसे पक्का यकीन हो गया कि नानक एक दिव्य पुरुष है। लोगों को देखकर नाग अपनी बिल में चला गया और राय बुलार ने बड़े सत्कार के साथ गुरु जी के चरण छुए और उनका अनुयायी बन गया।

गुरु जी का एकान्त में बैठना :

गुरु नानक और बड़े हुए तो उन्होंने दूसरे लोगों से दूर रहना और एकान्त में बैठना आरंभ कर दिया। कई–कई दिन वह अकेले एकान्त में चुपचाप बैठे रहते और आराधना करते हुए समय बिताते। माता–पिता उनकी सेहत को लेकर चिंतित हो गये। उन्हें गुरु जी का दुनियादारी से विरक्त रहना एक पागलपन लगता था। एक दिन, उन्होंने अपने वैद्य हरीदास को बुलाया। वैद्य आकर गुरु जी की नब्ज़ देखने लगा। गुरु जी ने अपनी बांह वैद्य के हाथ में से खींच ली और पूछा, "वैद्य जी, आप क्या कर रहे है ?" वैद्य ने उत्तर दिया कि वह उनकी बीमारी की जांच कर रहा था। इस पर गुरु जी हँसे और वैद्य के प्रति यह 'शबद' उच्चरित किया :–

"वैदु बुलाया वैदगी पकड़ि ढंढ़ोले बांह।।
भोला वैदु न जाणई करक कलेजे माहि।। 1 ।।

(मलार की वार, महल्ला 1, पृष्ठ 1279)

वैद्य हरीदास पागल मन के रोगियों के बारे में जानता था। सो उसने पूछा, "आपका ख़याल है कि मैं भी रोगी हूँ और मुझे इलाज करवाने की ज़रूरत है।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "तुम्हारी आत्मा को रोग लगा हुआ है– अंहकार का रोग। यह हमें जीवन के स्रोत स्वयं परमेश्वर से दूर करता है।" हरीदास ने पूछा कि इसका कोई इलाज है ? गुरु जी ने उत्तर दिया :

"कंचन काया निर्मल हंसु।।
जिसु महि नामु निरंजन अंशु।।
दुख रोग सभि गया गवाइ।।
नानक छूटसि साचै नाइ।।

(मलार, महल्ला 1, पृष्ठ 1256)

काफी विचार–विर्मश के बाद हरीदास दिव्य गुरु के चरणों पर झुका और माता–पिता से कहने लगा कि आप अपने पुत्र के बारे में चिंता छोड़ दें, क्योंकि यह पुत्र सारे संसार की रोगी आत्माओं का रोग दूर करने के लिए जन्मा है।

सच्चा सौदा :

गुरु जी की आत्मिक महानता के बारे में इतने सारे प्रमाणों के बावजूद महता कालू जी को विश्वास नहीं हुआ था और उन्होंने सोचा कि पुत्र यूँ ही अलाभकारी सोच–विचार में समय बर्बाद कर रहा है। सो, वे नानक जी को व्यापार में डालना चाहते थे। उन्होंने गुरु जी को बीस रुपये देकर पास के एक गाँव चूहड़काणां भेजा कि आम इस्तेमाल में आने वाली वस्तुएँ खरीदकर, वह उन्हें मुनाफे वाले भाव में बेच आये। परिवार का सेवक बाला भी साथ भेज दिया।

जाते हुए राह में गुरु जी ने फ़कीरों की एक टोली देखी, जो कई दिनों से भूखी थी। गुरु जी ने सारे रुपयों का रसद–पानी मंगवाकर फ़कीरों को खिला दिया और इसे एक सच्चा सौदा कहा। गुरु जी ने अनुभव कर लिया कि उन्होंने कैसा कार्य किया है और वापस घर नहीं गये, बल्कि गाँव से बाहर एक वृक्ष के नीचे बैठ गये। बाला घर गया और उसने पिता को सारी बात बताई। पिता महता कालू को बहुत गुस्सा

आया, पर गुरु जी ने बताया कि इससे अधिक लाभ वाला कोई दूसरा सौदा उनके खयाल में आया ही नहीं। यह पवित्र पुराना वृक्ष आज तक संभाल कर रखा गया है। गुरु जी की इस याद में वहाँ गुरद्वारा 'थम्भ साहिब' स्थित है।

इन सभी घटनाओं से गुरु जी की आम सांसारिक मसलों की तरफ से अरुचि पर कोई असर नहीं पड़ा और वह प्रभु आराधना में ही मस्त रहे।

गुरु जी का विवाह :

गुरु जी को संसार के कार्य–व्यवहार में डालने की खातिर अगला कदम था– विवाह। अलग–अलग जनम–साखियों में गुरु जी के विवाह की अलग–अलग तारीख दी गयी है और यही समझा जाता है कि उनकी आयु 14 से 18 वर्ष के बीच थी, जब उनका विवाह हुआ। गुरु जी की पत्नी, बीबी सुलक्खनी, गुरदासपुर जिले में बटाला नगर के वासी भाई मूला जी की सुपुत्री थी। उनके दो बेटे हुए– श्रीचन्द और लख्मी दास।

पिता कालू जी ने जल्द ही देख लिया कि विवाहित जीवन भी गुरु जी को उनके आध्यात्मिक मिशन वाले कार्यों से अलग नहीं कर सका। असल में, गुरु जी के लिए सिर्फ अपनी और अपने परिवार की देखभाल इतनी महत्वपूर्ण नहीं थी, जितना कि इससे ऊपर उठकर ईश्वरीय प्रबंध में अपने आप को लगाकर, अपने आसपास के संसार को आध्यात्मिक रंग में रंगना था। समस्त मनुष्य जाति ही गुरु जी का परिवार थी और मनुष्य जाति की सेवा ही प्रभु की सेवा थी। भाई गुरदास जी ने लिखा है कि गुरु नानक जी ने संसार को झूठ, जुल्म, फरेब और कट्टरता की आग में जलते हुए देखा। शाश्वत प्यार, सच्चाई और श्रद्धा के द्वारा संसार की यह आग बुझाने की खातिर उन्हें संसार में घूमना पड़ा। गुरु जी का इलाही मिशन था – मानव जाति को भ्रातृत्व भाव (भाईचारे) का पाठ पढ़ाना और अकाल पुरुख को परमपिता मानने की शिक्षा देना। "सभी जीव एक अकाल पुरुख के ही अंश हैं, समस्त मनुष्य जाति एक अकाल पुरुख की ज्योति है, तब बुरा कौन और अच्छा कौन ?"

गुरु नानक जी का सुल्तान पुर में आगमन :

गुरु जी का बहनोई जैराम, सुल्तान पुर के हाकिम नवाब दौलत खान लोधी का दीवान था। कहा जाता है कि जैराम और राय बुलार दोनों इस विचार के थे कि नानक एक सन्त है, जिसके साथ उसका पिता अच्छा बर्ताव नहीं कर रहा। सो, जैराम ने इकरार किया कि वह गुरु जी के लिए सुल्तान पुर में कोई नौकरी तलाश देगा। गुरु जी की बहन, बीबी नानकी गुरु जी की अत्यंत श्रद्धालू थी। दोनों जब सालभर बाद तलवंडी में माँ–बाप से मिलने के लिए आये, तो बहन ने गुरु जी की सांसारिक कामों में अरुचि के कारण पिता को खीझते हुए देखा। उसने भाई को अपने संग सुल्तान पुर ले जाने का फैसला कर लिया। पिता कालू भी मान गये।

जैराम ने गुरु जी को नवाब के सरकारी अनाज गोदाम में भंडारी की नौकरी दिला दी, जहाँ जमीनों के लगान के बदले में अनाज इकट्ठा होता था, जिसे बाद में बेचा जाता था। गुरु जी ने लगान का काम बड़ी कुशलता से किया। बाद में, रबाबी मरदाना भी गुरु जी के पास आ गया और अन्य मित्र भी। गुरु जी ने सबका परिचय खान से करवाया, जिसने अपने राज–प्रबंध में इन सबको योग्य नौकरियों पर लगा लिया।

एक दिन, गुरु जी अनाज तौलते हुए एक–एक तौल को गिनते जा रहे थे– 'एक, दो, तीनकृ दस, ग्यारह, बारह, तेरह"। जब तेरह गिना तो गुरु जी समाधी में लीन होकर 'तेराकृतेराकृतेराकृ' कहते हुए अनाज तौलते गये। ग्राहकों को समझ में नहीं आ रहा था कि इस भंडारी की कृपा से मिला इतना सारा अनाज वे कैसे उठाकर ले जाएँ। उन्हें अकाल पुरुख की बख़्शीशों का अनुमान नहीं था।

आखिर, जब यह मामला अपने शिखर पर पहुँच गया, तो गुरु जी के विरुद्ध दोष लगाया गया कि वह लापरवाही में अनाज लुटाये जा रहे हैं। नवाब ने पड़ताल करने का हुक्म दिया, जो बड़ी सावधानी से

की गई। गुरु जी को बदनाम करने वाले हैरान हो गये, जब गोदाम में पूरा अनाज निकला और हिसाब में भी गुरु जी के हक में बाकी रकम निकली। इसके बाद गुरु जी ने अपना इस्तीफा नवाब को दे दिया ताकि वह अपने इलाही मिशन में लग जाएँ।

गुरु जी का लोप होना :

जनम–साखियाँ बताती हैं कि एक दिन गुरु जी निकट ही बहती वेईं नदी में स्नान करने के लिए गये। स्नान करते हुए वह अचनाक नदी के पानी में लोप हो गये और इस अवस्था में वह तीन दिन रहे।[6] इस समय के दौरान गुरु जी को अकाल पुरुख के दर्शनों की झलक मिली और अकाल पुरुख ने उन्हें संसार में 'ईश्वरीय नाम' के प्रचार का काम सौंपा। अकाल पुरुख ने गुरु नानक को 'नाम अमृत' से लबालब भरा कटोरा दिया, जो गुरु नानक जी ने पिया और फिर अकाल पुरुख का आदेश हुआ :

"ओ नानक, तुमने अपने आप को नाम में अभेद कर लिया है, तुम्हारा स्वागत है,
जाओ, जिस कारज के लिए तुमने जन्म धारण किया है, उसे जाकर करो,
कलयुग के लोगों ने भयानक व्यवहार अपना लिए हैं और अपने मन को अति हीन बना लिया है,
वे भाँति–भाँति के देवताओं की पूजा करते, 'नाम' को भूल बैठे हैं और पापों में डूबे हुए है। जाओ, 'नाम' के लिए प्रेम और श्रद्धा का प्रसार करो और धरती का बोझ हल्का करो। जाओ, ईश्वरीय नाम की शोभा बढ़ाओ और पाखंड का नाश करो।"

तब गुरु नानक जी ने नीचे लिखे 'शबद' का गायन किया :

"कोटि कोटी मेरी आरजा पवणु पीयणु अपिआउ।
चंदु सूरजु दुइ गुफै न देखा सुपनै सउण न थाउ।
भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवड आखा नाउ। 1 ।
साचा निरंकारु निज थाइ।
सुणि सुणि आखणु आखणा जे भावै करे तमाइ। 1 । रहाउ।
कुसा कटीआ वार वार पीसणि पीसा पाइ।
अगी सेती जालीआ भसम सेती रलि जाउ।
भी तेरी कीमति न पवै हउ केवडु आखा नाउ। 2 ।
पंखी होइ कै जे भवा सै असमानी जाउ।
नदरी किसै न आवऊ न किछु पीआ न खाउ।
भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ। 3 ।
नानक कागद लख मणा पड़ि पड़ि कीचै भाउ।
मसू तोटि न आवई लेखणि पउणु चलाउ।
भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ। 4 ।

(श्री राग महल्ला 1, पृष्ठ 14)

अब आवाज आई, "ओ नानक, जिस पर मेरी दया की नज़र पड़े, तू उस पर कृपालू होना, मैं भी कृपालू होऊँगा। मैं आदि परमेश्वर और तू गुर परमेश्वर।"

यह दैवी सन्देश पुरातन जन्म–साखी में अंकित है। गुरु नानक जी स्वयं बताते हैं कि अकाल पुरुख ने गुरु जी को कहा कि संसार में घूमो और ईश्वर–शोभा का गायन करो। गुरु जी बताते हैं कि जब उन्होंने संसार में अपना कर्तव्य पूरा कर लिया, तो अकाल पुरुख ने उन्हें फिर से बुलाया :

"हउ ढाढी वेकारु कारै लाया।
राति दिहै कै वार धुरहु फुरमाया।
ढाढी सचै महलि खसमि बुलाया।
सची सिफति सालाह कपड़ा पाया।
सच्चा अमष्त नामु भोजनु आया।

गुरमती खाधा रजि तिनि सुखु पाया।
ढाढी करे पसाउ सबदु वजाया।
नानक सचु सालाहि पूरा पाया।"

(माझ दी वार, पउड़ी 27, पृष्ठ 150)

कहते हैं कि तीन दिनों के बाद, जब गुरु जी फिर से प्रगट हुए, कुछ लोगों ने उनके शीश के इर्द–गिर्द प्रकाश का एक चक्र देखा। कुछ कहते हैं कि नानक जी की गुरुता उनके वेईं नदी में से निकलकर फिर से दृश्यमान होने से आरंभ हुई। इस सम्बन्ध में यहाँ यह उल्लेख करना ज़रूरी है कि सिख धर्म में तीन शब्द हैं – अकाल पुरुख, गुरु और गुरबाणी। सिख धर्म के अनुसार एक और केवल एक ही अकाल पुरुख है। वह अपने प्रतिनिधि संसार में भेजता है, जिसे गुरु कहा गया है और जो दिव्य प्रकाश का शारीरिक रूप है। अकाल पुरुख तब अपने गुरु के द्वारा अपना सन्देश 'गुरबाणी' भेजता है।

गुरु के बिना गुरबाणी नहीं हो सकती। गुरु एक माध्यम है जिसके द्वारा गुरबाणी प्रदान की जाती है। सो, जब सात वर्ष की उम्र में गुरु नानक जी ने पहला ईश्वरीय सन्देश अध्यापक को (राग आसा महल्ला 1, पट्टी लिखी, पृष्ठ 432) दिया, तब उनका गुरु होना ज़रूरी था और वह गुरु थे। वेईं नदी में अंतर्धान हो जाने से पहले, गुरु जी ने बहुत सारी बाणी का उच्चारण किया था। इस तरह गुरु जी ने गुरु के तौर पर ही जन्म लिया और उनकी गुरुता उनके जन्म से ही शुरू हुई।

भाई गुरदास जी लिखते हैं कि पहले अकाल पुरुख ने गुरु नानक जी को वरदान दिया और फिर उन्हें इस संसार में भेजा, 'नाम' का प्रचार करने के लिए।

"पहिलां बाबे पाया बख्श दर,
पिछों दे फिर घाल कमाई।"

(भाई गुरदास, वार प्रथम, पउड़ी 24)

गुरु नानक जी का गुरु कौन था ? जब उनसे पूछा गया कि उनका गुरु कौन है तो गुरु जी ने उत्तर दिया कि अकाल पुरुख स्वयं उनका गुरु था :

"अपरम्पर पारब्रह्मु परमेसरु नानक गुर मिलिया सोई जीउ।"

(सोरठ, महल्ला 1, पृष्ठ 599)

नदी में से पुनः प्रगट होने के बाद, गुरु नानक जी ने एक दिन के लिए मौन धार लिया और फिर उन्होंने ऐलान किया, "ना कोई हिंदू, ना मुसलमान।" इसका अर्थ था कि मनुष्य मनुष्य में कोई फर्क नहीं है। (परन्तु कुछ लोगों ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की कि हिंदुओं और मुसलमानों, दोनों ने अपने धर्मों के उपदेश भुला दिए हैं।) इस घोषणा ने नवाब दौलत खान और उसके काज़ी को क्रोध में पागल कर दिया। नवाब ने गुरु जी से पूछा कि क्या उसका काज़ी सच्चा मुसलमान नहीं ? गुरु जी ने एक सच्चे मुसलमान के लक्षण इस तरह बताये :

"मुसलमाणु कहावणु मुसकलु
जा होई ता मुसलमाणु कहावै।
अवलि अउलि दीनु करि मिठा
मसकल माना मालु मुसावै।
होई मुसलिमु दीन मुहाणै
मरण जीवण का भरमु चुकावै।
रब की रजाइ मन्ने सिर उपरि
करता मन्ने आपु गवावै।
तउ नानक सरब जीआ मिहरम्मति
होइ त मुसलमाणु कहावै।"

(माझ की वार, महल्ला 1, पृष्ठ 141)

तब नवाब ने गुरु जी से पूछा, "अगर हिंदुओं और मुसलमानों में कोई फर्क नहीं, तो आप हमारे साथ मिलकर नमाज़ क्यों नहीं पढ़ते ?" गुरु जी उनके साथ मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के लिए राजी हो गये, जहाँ काज़ी ने नमाज़ आरंभ करनी थी। नमाज़ पढ़ते समय काज़ी और नवाब दोनों खड़े हुए, घुटनों के बल

बैठे और सिर झुकाया, जैसा कि तरीका था, पर गुरु जी खड़े रहे। नमाज़ खत्म होने पर काज़ी ने पूछा, "आपने नमाज़ में हिस्सा क्यों नहीं लिया ?" इस पर गुरु जी ने उत्तर दिया, "मैंने नमाज़ में हिस्सा लिया था, पर तुम दोनों ने नहीं।" फिर गुरु जी ने समझाया, "जब काज़ी नमाज़ पढ़ रहा था, उसे याद आया कि उसके घर के आंगन में कुआं है और उसका मन चिंतित था कि उसके घर में नवजन्मी बछेरी कुएं में न गिर जाए। काज़ी का मन इस प्रकार नमाज़ में नहीं था। नवाब भी जब नमाज़ पढ़ने का दिखावा कर रहा था, उसका मन काबुल में घोड़े खरीदने की ओर लगा हुआ था।"

दोनों ने गुरु जी की बात को सच मान लिया और नवाब काज़ी से ऊँचे स्वर में बोला, "तू देखता नहीं कि अल्लाह नानक की मार्फत हमें कह रहा है ?" मुसलमान दिन में पाँच वक्त नमाज़ पढ़ते हैं। गुरु जी ने बताया कि नमाज़ का मतलब और इसकी उत्तमता क्या है :–

"पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ।
पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ।
चउथी नीयति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ।
करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाण सदाइ।
नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ।"

(माझ की वार, महल्ला 1, पृष्ठ 141)

गुरु नानक जी ने कभी भी एक मुसलमान या एक हिंदू को नहीं कहा कि वह मरने के बाद स्वर्ग में स्थान लेने के लिए गुरु जी का शिष्य बन जाएँ। वह मुसलमान को सच्चा मुसलमान और हिंदू को सच्चा हिंदू बनने के लिए कहते थे, ताकि वे मुक्ति प्राप्त कर सकें।

गुरु नानक जी का सफ़र :

गुरु नानक जी ने देखा कि जगत घृणा, कट्टरता, झूठ और पाखंड के कारण दुख पा रहा है। जगत दुष्टता और पापों में डूबा हुआ है। सो, इस धरती पर मनुष्य जाति को पुनर्जीवन देने के लिए वह चल पड़े। गुरु जी मनुष्यों के लिए सच, दिव्य प्रेम, शान्ति और प्रसन्नता की मिसाल लेकर चले। उन्होंने अपना ईश्वरीय मिशन प्रारंभ किया और पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण की तरफ हिंदुओं, मुसलमानों, बौद्धों, जैनियों, सूफियों, योगियों और सिद्धों के अलग–अलग केन्द्रों पर गये। वे भिन्न–भिन्न धर्मों, कबीलों, सभ्यताओं और नस्लों के लोगों से मिले। उनके इस सफ़र को 'उदासियाँ' कहा जाता है।[7]

गुरु नानक जी ने अपनी पहली उदासी (यात्रा) भारत के पूरब और दक्षिण की ओर की और आठ वर्षों से कुछ अधिक का समय व्यतीत करके घर
लौट आए।[8] सुल्तानपुर से गुरु जी अगस्त 1507 में चलकर अपने गांव तलवंडी आए, अपने माता, पिता जी को मिलने और अपने लम्बे सफ़र के बारे में बताने के लिए। वृद्ध माता–पिता अपने बुढ़ापे में अपने नौजवान पुत्र से सुख और रखवाली चाहते थे। और इस कारण उन्होंने नानक जी को ना जाने के लिए कहा। लेकिन, हजारों ही दूसरे लोग थे, जो इस 'दैवी गुरु' से सुख, प्रेम और मुक्ति पाने की प्रतीक्षा कर रहे थे। सो, गुरु जी ने माता–पिता से कहा, "अकाल पुरुख की ओर से आदेश मिला है कि जिधर वह जाने के लिए हुक्म दे, मुझे उधर ही जाना है।"

पहला पड़ाव ऐमनाबाद :

गुरु जी माता–पिता से विदा लेकर अपने साथी भाई मर्दाना रबाबी के संग अपने मिशन पर चल पड़े। उन्होंने पहला पड़ाव सैदपुर, जिसे अब ऐमनाबाद कहा जाता है, में डाला। यहाँ वह एक गरीब बढ़ई, जिसका नाम 'लालो' था, से मिले। गुरु जी ने गरीब लालो पर अपनी कृपा–दृष्टि की और उसे ईश्वरीय प्रेम का वरदान दिया और वह निहाल होकर पवित्र मनुष्य बन गया। गुरु जी ने कुछ समय उसके पास मेहमान की तरह रहने का विचार बनाया। शहर के प्रमुख मलक भागो को खबर मिली कि एक महात्मा पुरुष लालो के पास ठहरे हुए हैं। मलक भागो भ्रष्टाचारी था और उसने अनुचित ढंग से बहुत सारा धन इकट्ठा किया

हुआ था। उसने एक बड़ा समारोह किया और गुरु जी सहित सभी धर्मात्मा पुरुषों को न्यौता दिया। गुरु जी ने इसे स्वीकार नहीं किया। तब मलक ने गुरु जी के लिए एक विशेष प्रबंध किया और विनती कर भेजी कि गुरु जी आकर उसके घर में भोजन करें। आखिर, गुरु जी चले गये।

मलक भागो ने कहा, "महात्मा जी, मैंने आपके लिए कई तरह का भोजन तैयार किया है, पर आप एक गरीब बढ़ई के पास ठहरे हो और उसकी सूखी रोटी खा रहे हो। कृपा करो, मेरे पास आकर ठहरो।" गुरु जी ने उत्तर
दिया, "मैं आपका भोजन नहीं खा सकता क्योंकि यह अनुचित तरीकों से प्राप्त किया हुआ है और गलत ढंग से गरीब लोगों का लहू चूसकर कमाये गये धन से बनाया गया है।" इस पर मलक भागो को बहुत क्रोध आया और उसने गुरु जी से इसका प्रमाण मांगा। गुरु जी ने लालो के घर से एक रोटी मंगवाई। एक हाथ में गुरु जी ने लालो की रोटी पकड़ी और दूसरी में मलक भागो की। जब दोनों रोटियों को दबाकर निचोड़ा तो लालो की रोटी में से दूध निकला और मलक भागो की रोटी में से लहू की बूंदें। मलक भागो अपनी गलती पर पूरी तरह ग्लानि से भर उठा और उसने गुरु जी से क्षमा मांगी। गुरु जी ने उससे कहा कि वह अपना सारा हराम का कमाया हुआ धन गरीबों में बांट दे और आगे से नेक जीवन जिये। मलक भागो का गुरु जी के आशीर्वाद से पुनर्जन्म हो गया।

सज्जन ठग्ग :

पुरातन जनम–साखी के अनुसार गुरु जी पूरब की ओर मुड़ने के बजाय तुलम्बे(अब मक्कदमपुर नाम से पश्चिमी पाकिस्तान में) चले गये और सज्जन ठग[9] से मिले। सज्जन हमेशा सफेद कपड़े पहने हाथ में माला पकड़े रखता था और इस तरह एक धर्मात्मा मनुष्य होने का दम्भ भरता था। उसने अपने रिहायशी स्थान के आंगन में एक मंदिर और एक मसजिद बना रखी थी। वह राह जाते लोगों को बुलाकर उन्हें रात में वहाँ ठहरकर आराम करने के लिए प्रेरित करता था। पर रात के समय उनका सामान और धन लूट लेता और उन्हें कभी–कभी मार भी देता था। गुरु जी उसके पास गये और निवास किया। रात पड़ने पर गुरु जी जल्दी नहीं सोये। इस कारण सज्जन घबरा उठा और अपना लूटने वाला दुष्ट काम न कर सका। सज्जन ने गुरु जी को आराम करने और सो जाने के लिए कहा, पर गुरु जी ने उत्तर दिया, "अकाल पुरुख का भगत तब तक नहीं सोता, जब तक अकाल पुरुख सो जाने के लिए आदेश नहीं देता।" तब गुरु जी ने मर्दाने को रबाब बजाने के लिए कहा और
इस 'शबद' का गायन किया :

"उजलु कैहा चिलकणा घोटिम कालड़ी मसु।
धोतिया जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु।
सज्जण सेई नालि मै चलदिया नालि चलन्नि।
जिथै लेखा मंगीअै तिथै खड़े दिसन्नि। रहाउ।
कोठे मंडप माड़ीया पासहु चितवीआहा।
ढठ्ठीया कम्मि न आवनी विचहु सखणीआहा।
बगा बगे कपड़े तीरथ मंझि वसन्नि।
घुटि घुटि जीआ खावणे बगे ना कहीअनि।
सिम्मल रुखु सरीरु मैं मैं जन देखि भुलन्नि।
से फल कम्मि न आवनी ते गुण मैं तनि हन्नि।
अंधुलै भारु उठाया डूगर वाट बहुतु।
अखी लोड़ी ना लहा हउ चड़ि लंघा कितु।
चाकरीआ चंगियाईआ अवर सिआणप कितु।
नानक नामु समालि तूं बधा छुटहि जितु।
(सूही, महल्ला 1, पृष्ठ 729)

जब सज्जन ने इलाही सुरीला 'शबद' सुना, तो अनुभव किया कि यह शबद असल में उसे ही सम्बोधित हुए हैं। इस पर वह गुरु जी को नमस्कार कर उनके चरणों पर गिर पड़ा और विनती की कि उसके पाप बख़्श दें। गुरु जी ने कहा, "सज्जन, अकाल पुरुख की दरगाह में बख़्शीश दो बातों पर मिलती है, खुले मुँह अपने पापों को मानना और गलतियों का सुधार करना।" सज्जन झुककर उठ खड़ा हुआ। गुरु जी ने उससे कहा कि बुरे कामों से एकत्र किया हुआ सारा धन गरीबों में बांट दे। उसने गुरु जी का हुक्म मान लिया और चरन पाहुल[10] लेकर गुरु जी का शिष्य बन गया। कहा जाता है कि पहला ऐतिहासिक सिख गुरद्वारा इसी स्थान पर बनाया गया।

गुरु नानक जी का हरिद्वार जाना :

हरिद्वार, गंगा नदी के किनारे बसा हिंदुओं का एक तीर्थस्थल है। वैशाखी का दिन था और यात्री पौ फटे उठकर नदी में स्नान कर रहे थे। जैसे ही, सूरज का उदय हुआ, वे सूरज की ओर पानी उलीचने लगे। जब गुरु नानक जी ने उनसे पूछा कि तुम क्या कर रहे हो, तो एक पुजारी ने उत्तर दिया, "हम अपने मर चुके पितरों को सूरज के क्षेत्र में उनकी प्यास मिटाने के लिए जल भेज रहे हैं।"

इस पर गुरु जी ने पश्चिम की ओर जल फेंकना शुरू कर दिया। यात्री हँसने लगे और गुरु जी से पूछा कि वे यह क्या कर रहे हैं। गुरु जी ने उत्तर दिया, "मैं पंजाब में अपने गाँव के खेतों को पानी दे रहा हूँ।" पुजारी पूछने लगा, "आपका पानी इतनी दूर कैसे जा सकता है ?" गुरु जी ने तुरन्त पूछा, "तुम्हारे पितर यहाँ से कितनी दूर हैं ?" एक ने उत्तर दिया, "दूसरे जगत में।"

गुरु जी ने कहा, "अगर यह पानी मेरे खेतों में, जो यहाँ से करीब चार सौ मील दूर हैं, नहीं पहुँच सकता तो तुम्हारा पानी तुम्हारे पितरों को, जो इस जगत में ही नहीं हैं, कैसे पहुँच सकता है ?" सभी लोग यह सुनकर मूक हो गये। गुरु जी ने भ्रमों और झूठी रस्मों, देवी–देवताओं की पूजा के साथ–साथ शरीर को कष्ट देने और संसार–त्याग के विरुद्ध उपदेश दिया। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि केवल एक अकाल पुरुख, निरंकार का गुणगाण करने की ज़रूरत है। इस तरह गुरु जी ने सत्य और ज्ञान का रास्ता दिखलाया। गंगा के किनारे जहाँ गुरु जी ठहरे, वहाँ एक गुरद्वारा नानकवाड़ा के नाम से स्थित है।

गुरु जी का गोरखमता जाना :

हरिद्वार से गुरु जी गोरखमता की ओर चल पड़े, जो पीलीभीत से बीसेक मील उत्तर की ओर है– जोशी मठ और अल्मोड़ा के रास्ते। अल्मोड़ा पर चांद परिवार का राज था और वे अपनी देवी चंडी को प्रसन्न करने के लिए मनुष्यों की बलि देते थे। गुरु जी ने उन्हें सच का रास्ता दिखाया और इस तरह उन्होंने अपनी देवी की प्रसन्नता के लिए मासूम लोगों का कत्ल करना बन्द कर दिया।

वहाँ से चलकर गुरु जी गोरखमता पहुँचे। यह गोरखनाथ सम्प्रदाय के जोगियों का मठ था। इन जोगियों को रिद्धियाँ–सिद्धियाँ प्राप्त थीं। गृहस्थ लोग इनसे आशीर्वाद लेने की इच्छा रखते थे। लोग इन जोगियों के श्राप से हर हाल में बचना चाहते थे। आसपास से लोगों ने इनके विषय में सुन रखा था और इनकी प्रसिद्धि दूर–दूर तक फैली हुई थी। कहा जाता है कि इन जोगियों ने गुरु नानक के बारे में सुन रखा था। जब गुरु जी वहाँ पहुँचे तो इन्होंने गुरु जी का बड़े आदर–भाव से स्वागत किया और उन्हें जोग मत धारण करने, उन जैसा पहरावा धारण करने तथा जोगी बनकर उनमें शामिल हो जाने के लिए आमंत्रण दिया। गुरु जी ने इन्हें समझाया कि संसार से अलग रहना, जिससे अन्य लोगों को कुछ लाभ नहीं मिलता, व्यर्थ है। गुरु जी ने यह 'शबद' उच्चारित किया :–

"जोगु ना खिंथा जोगु न डंडै जोग न भस्म चढ़ाइयै।
जोगु न मुंदी मूंड मुडाइयै जोगु न सिंडी वाइयै।
अंजन माहि निरंजनि रहीयै जोग जुगति इव पाइयै।
गली जोगु न होई। ऐक दर्षष्टि कर समसरि जाणै

जोगी कहीयै सोई। 1 । रहाउ।
जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाइयै।
जोगु न देसि दिसंतरि भवियै जोगु न तीरथि नाइयै।
अंजन माहि निरंजनि रहीयै जोग जुगति इव पाइयै। 2 ।
सतिगुरु भेटै त सहिसा तूटै धावत वरज रहाइयै।
निझर झरै सहिजधुनि लागै घर ही परचा पाइयै।
अंजन माहि निरंजनि रहीयै जोग जुगति इव पाइयै। 3 ।
नानक जीवतिआ मरि रहीयै ऐसा जोगु कमाइयै।
वाजे बाझहु सिंङी वाजै तउ निरभउ पदु पाइयै।
अंजन माहि निरंजनि रहीयै जोग जुगति तउ पाइयै। 4 ।
(सूही महल्ला 1, पृष्ठ 730)

यह सुनकर जोगियों ने गुरु जी को प्रमाण किया। गुरु जी की शिक्षा का इतना प्रभाव पड़ा कि गोरखमता का नाम नानकमता हो गया।

रीठा साहिब :

गोरखमता के आसपास जंगल थे। वहाँ से करीब चालीस मील दूर चलकर गुरु जी जोगियों की एक अन्य मंडली से मिले। वह एक रीठे के वृक्ष के नीचे बैठ गये और जोगियों से कहा कि गृहस्थ को त्यागकर, जंगलों में संसारी जीवन से दूर रहकर, मुक्ति प्राप्त नहीं होगी। शान्ति, शाश्वत सुख और आनन्द प्राप्त करने के लिए अन्दरूनी तब्दीली तो कहीं भी रहकर अकाल पुरुख के नाम का सुमिरन करने भर से ही मिल सकती है। जोगियों ने प्रश्न किया, "गुरु जी, कामना की आग, शरीर को निरंतर संयम के अधीन करने पर भी नहीं बुझती। कृपा करके बताओ कि इसे किस तरह बुझाया जाए।" गुरु जी ने अपना उत्तर इस शबद के माध्यम से दिया :–

"हउ हउ मै मै विचहु खोवै। दूजा मेटै ऐको होवै।
जगु करड़ा मनमुखु गवारु।
शबदु कमाइयै खाइयै सारु।
अंतरि बाहरि ऐको जाणै।
नानक अगनि मरै सतिगुर कै भाणै।"
(रामकली महल्ला 1, सिध गोष्ट, पृष्ठ 943)

जोगियों का चतुर मन गुरु जी की और परीक्षा लेना चाहता था। यह जानते हुए कि गुरु जी के पास उन्हें देने के लिए कुछ नहीं, उन्होंने गुरु जी से कहा कि कुछ खाने के लिए दो। गुरु जी ने रीठे के वृक्ष के नीचे बैठे हुए थे और रीठा हमेशा कड़वा होता है। गुरु जी ने उन्हें रीठे खाने के लिए दिए। जोगी रीठे चखकर बड़े हैरान हुए कि वे तो बहुत मीठे थे। अकाल पुरुख की कृपा के कारण, वृक्ष के आधी ओर जहाँ गुरु जी बैठे थे, दो रीठे मीठे हो गये और वृक्ष के दूसरे आधे हिस्से वाले रीठे कड़वे रहे। इस वृक्ष का फल आज भी इसी तरह है।

गुरु जी का बनारस में आगमन :

गोरखमता के बाद गुरु जी दक्षिण के ओर चल पड़े और गोला, अयोध्या, प्रयाग(इलाहाबाद) से होते हुए बनारस (जिसे वाराणसी भी कहते हैं) पहुँचे, जिसे हिंदू धार्मिक विद्ववता का केन्द्र और शिव देवता का निवास–स्थान कहा जाता है। गुरु जी अपने साथी मर्दाना के साथ शहर के एक खुले चौक में बैठ गये। पंडित चतुर दास शहर का प्रमुख ब्राह्मण था। गुरु जी का पहरावा न तो एक गृहस्थ मनुष्य जैसा था, न ही एक सन्यासी जैसा। यह देखकर पंडित चतुर दास गुरु जी के साथ एक लम्बी चर्चा करने लग पड़ा।

गुरु जी ने उससे पूछा कि उसने क्या–कुछ पढ़ रखा है, लोगों को उसने क्या शिक्षा दी है और उसने अपने शिष्यों को क्या ज्ञान दिया है। पंडित ने उत्तर दिया, "प्रभु के आदेश से मैं लोगों को चौदह तरह का ज्ञान सिखाता हूँ– पढ़ना, तैरना, चिकित्सा, रसायन, ज्योतिष, छह राग और उनकी रागनियों का गायन, कामशास्त्र, व्याकरण, संगीत, घुड़सवारी, नृत्यकला, तीरअंदाजी, धर्मशास्त्र और नीति। "गुरु जी ने समझाया कि इन सबसे अच्छा है–अकाल पुरुख से संबंधित ज्ञान। इस पर गुरु जी ने रामकली महल्ला 1, दक्खनी ओंकार के 54 पदों का उच्चारण किया :

"ओंकारि ब्रह्मा उत्पति। ओंकारु कीया जिनि चिति।।
ओंकारि सैल जुग भये। ओंकारि बेद निरमये।
ओंकारि शबदि उधरे। ओंकारि गुरमुखि तरे।
ओनम[11] अखर सुणहु बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।1। रहाउ।
सुणि पांडे किआ लिखहु जंजाला। लिखु रामनाम गुरमुखि गोपाला।
समै सभु जगु सहिजि उपाया तीनि भवन इक जोती।
गुरमुखि वस्तु परापति होवै चुणि लै माणक मोती।
समझै सूझै पड़ि पड़ि बूझै अंति निरंतरि साचा।
गुरमुखि देखै साचु समाले बिनु साचे जगु काचा।"

(रामकली महल्ला 1, दक्खनी ओंकार, पृष्ठ 929)

रामकली राग का यह शबद सुनकर पंडित चतुर दास, गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा और गुरु जी का शिष्य बन गया। और उस इलाके में सिख धर्म का प्रचार करने का उसने बहुत कार्य किया। जहाँ पर गुरु जी ठहरे थे, वहाँ पर अब गुरद्वारा 'गुरु का बाग' स्थित है।

गुरु जी का गया में आगमन :

बनारस के बाद गुरु जी गया पहुँचे, जो फलगू (सरयू) नदी के किनारे हिंदुओं का प्रसिद्ध तीर्थ है। वहाँ हिंदु पुजारियों ने घोषणा की हुई थी कि जो कोई भी गया में भेंट चढ़ाएगा, खास तौर पर वैशाखी के समय, संसार से कूच कर चुके उसके पुरखों की सात कुलों को मुक्ति प्राप्त होगी। भोले–भाले लोग अधिक से अधिक धन की भेंट चढ़ाते और पुजारी पितरों को चावलों के कोफते अर्पण करके भोजन करवाते और छोटे–छोटे दीये स्वर्ग में उनकी राह में रोशनी करने के लिए जलाते। गुरु जी यह देखकर हँसने लगे तो पुजारी क्रोध में आ गये। इस पर गुरु जी ने समझाया कि जो अपने शरीर संसार में छोड़ गये हैं, उन्हें कोई भोजन नहीं चाहिए और न ही देखने के लिए दीयों की रोशनी। अगर यह शरीर अगले संसार में नहीं जा सका, तो स्पष्ट है कि कोई पदार्थ वस्तु इस जगत में से दूसरी ओर नहीं पहुँच सकेगी। इस तरह गुरु जी ने लोगों को ज्ञान दिया और कहा कि एक निरंकार प्रभु की ही पूजा करो।

गुरु जी का कामरूप जाना :

गया के बाद गुरु जी उस इलाके में से गुजरे, जहाँ आधुनिक पटना शहर है और हाजीपुर पहुँचे। वहाँ से चलकर गुरु जी कंतनगर के रास्ते मालदा पहुँचे। मालदा शहर गंगा और महानदी के संगम पर बसा हुआ है। बताया जाता है कि मालदा के एक स्थानीय व्यापारी ने गुरु जी की बड़ी सेवा की, जिसके कारण गुरु जी ने उसे बहुत से वरदान दिये। गुरु जी का अगला पड़ाव आसाम में धुबरी था। धुबरी के बाद गुरु जी ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे–किनारे कामरूप की ओर चलते गये, जो आज वर्तमान गुवाहटी शहर के नज़दीक है। इस सारे रास्ते में बहुत सारे पुराने ऐतिहासिक गुरद्वारे गुरु जी के आने की याद में बने हुए हैं।

कामरूप शहर पर एक जादूगरनी का राज था। उसने अपना नाम नूरशाह, जिससे उसने जादू का हुनर सीखा था, रखा हुआ था। वह और उसकी साथिनें काले जादू का प्रयोग करतीं और उस इलाके में

अद्‌भुत शक्तियों का इस्तेमाल करती थीं। आसपास का सारा देश उसके अधिकार में था और बहुत सारे रहस्यवादी, जोगी आदि उसके जादू की चालों का शिकार हो गये थे।

गुरु जी शहर के बाहर एक वृक्ष के नीचे ठहर गये और मर्दाना कुछ खाने का सामान लेने शहर चला गया। राह में उसे कुछ स्त्रियाँ मिलीं जिनकी कपटी चालों में वह फंस गया। उन्होंने उसे मेमना बना दिया। जादू के प्रभाव तले वे मर्दाने को जो हुक्म सुनातीं, वह किये जाता। इस तरह नूरशाह के जादू में कैद वह वापस गुरु जी के पास न जा सका। गुरु जी जानते थे कि उनके रबाबी के साथ क्या घटित हुआ है। वह मर्दाने को जादूगरनियों से मुक्त करवाने के लिए चल पड़े। नूरशाह ने गुरु जी को आते देखा तो अपने जादू से उन्हें अपने वश में करने की कोशिश की। पर जादू सफल नहीं हुआ। उसने देखा कि उसका जादू बेकार हो गया है। उसकी निष्फल कोशिशों पर गुरु जी ने बुरे चरित्र वाली औरत के बारे में इन 'शबदों' का उच्चारण किया :–

"मंञु कुचजी अंमावणि डोसड़े हउ किउ सहु रावणि जाउ जीउ।
इकदू इकि चड़ंदीआं कउण जाणै मेरा नाउ जीउ।
जिनी सखी सहु राविआ से अंबी[12] छावड़ीएहि जीउ।
से गुण मंञु न आवनी हउ कै जी दोष धरेउ जीउ।
किआ गुण तेरे विथरा हउ किआ किआ घिना तेरा नाउ जीउ।
इकतु टोलि न अंबड़ा हउ सद कुरबाणै तेरै जाउ जीउ।
सुइना रूपा रंगुला मोती तै माणिकु जीउ।
से वस्तू सहि दितीआ मै तिन सिउ लाया चितु जीउ।
मंदर मिटी संदड़े पथर कीते रासि जीउ।
हउ ऐनी टोली भुलीअसु तिस कंत न बैठी पासि जीउ।
अंबरि कूंजा कुरलीआ बग बहिठे आइ जीउ।
साधन चली साहुरै किआ मुहु देसी अगै जाइ जीउ।
सुती सुती झालु थीआ भुली वाटड़ीआसु जीउ।
तै सह नालहु मुतीअसु दुखां कूं धरीआसु जीउ।
तुधु गुण मैं सभि अवगुणा इक नानक की अरदासि जीउ।
सभि राती सोहागणी मैं डोहागणि काई राति जीउ।"

(राग सूही महल्ला 1, पृष्ठ 762)

गुरु जी ने इस समय यह 'शबद' भी उच्चारा :

"गली असी चंगीआ आचारी बुरीआह।
मनहु कुसुधा कालीआ बाहरि चिटवीआह।
रीसा करिह तिनाड़ीआ जो सेवहि दरु खड़ीआह।
नालि खसमै रतीआ माणहि सुखि रलीआह।
होदै ताणि निताणीआ रहहि निमानणीआह।
नानक जनमु सकारथा जे तिन कै संगि मिलाह।"

(सिरी राग की वार महल्ला 1, पृष्ठ 85)

गुरु जी ने शबद का उच्चारण किया तो नूरशाह ने सोचा कि वह इन्हें धन से भरमा लेगी। उसकी चेलियों ने मोती, हीरे, सोना, चांदी गुरु जी के सम्मुख लाकर रख दिया। तब नूरशाह बोली, "ओ महान जादूगर, मुझे अपना चेला बना लो और अपनी जादू की कला सिखा दो।"

गुरु जी ने सारे धन–पदार्थ को ठुकरा दिया और यह 'शबद' उच्चारा :–

"इआनड़ीये मानड़ा काइ करेहि।
आपनड़ै घरि हरि रंगों की न माणेहि।
सहु नेड़े धन कम्मलीए बाहरु किआ ढूढ़ेहि।
भै किआ देहि सलाईया नैणी भाव का करि सीगारो।
ता सोहागइण जाणीयै लागी जा सहु धरे पियारो। 1 ।

इयाणी बाली किआ करे जा धन कंत न भावै।
करण पलाह करे बहुतेरे साधन महलु न पावै।
विणु करमा किछु पाईयै नाही जे बहुतेरा धावै।
लब लोभ अंहकार की माती माया माहि समाणी।
इनी बाती सहु पाईयै नाही भई कामणि इआणी। 2 ।
जाइ पुछहु सोहागणी वाहै किनी बाती सहु पाईयै।
जो किछु करे सो भला करि मानीयै हिकमति हुकमु चुकाईयै।
जाकै प्रेम पदारथ पाईयै तउ चरणी चितु लाईयै।
सहु कहै सो कीजै तनु मनो दीसै ऐसा परमलु लाईयै।
ऐव कहरि सोहागणी भैणे इनी बाती सहु पाईयै। 3 ।
आपु गवाईयै ता सहु पाईयै अउरु कैसी चतुराई।
सहु नदरि करि देखै सो दिनु लेखै कामणि नउनिधि पाई।
आपणे कंत पियारी सा सोहागणि नानक सा सभराई।
ऐसे रंगि राती सहज की माती अहिनिसि भाइ समाणी।
सुंदरि साइ सरूप बिचखण कहीयै सा सियाणी। 4 ।

(तिलंग महल्ला 1, पृष्ठ 722)

यह शबद सुनकर नूरशाह और उसकी साथिनें गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ीं और क्षमा की याचना की और मुक्ति के लिए मेहर की बख्शीश मांगी। गुरु जी ने उन्हे अकाल पुरुख का नाम मन लगाकर जपने, अपने गृहस्थ के फर्ज निभाने, जादू का धंधा त्याग देने के लिए उपदेश दिया और कहा कि इससे वे परमगति प्राप्त कर लेंगी। वे गुरु जी की श्रद्धालू शिष्य बन गईं। कुछ समय ठहर कर गुरु जी इन जाग्रत हुई आत्माओं को ईश्वरीय मिशन का प्रचार करने के लिए पीछे छोड़कर वहाँ से चल पड़े।

कौडा राक्षस :

गुरु जी ने आसाम के बियाबान जंगलों में मीलों का सफ़र किया। मरदाना बहुत थका हुआ और भूखा महसूस कर रहा था, सो गुरु जी और वह एक वृक्ष के नीचे बैठ गये। कुछ देर बाद, मर्दाना भोजन के लिए कुछ लेने चला गया। राह में उसे मानव को खाने वाला कौडा मिला। उसने मर्दाने को अचानक आ दबोचा और उसके हाथ–पैर रस्से से बांधकर दूसरी जगह पर ले चला, जहाँ कौडे ने एक बड़ा–सा कड़ाहा तेल से भरकर रखा हुआ था, अपने शिकार का मांस तलने के लिए। वह कड़ाहे के नीचे आग जलाने लगा, तो मर्दाना भयभीत हो उठा। उसने गुरु जी का स्मरण करके अरदास की कि वह आकर उसे छुड़ाएँ। गुरु जी को पहले ही मालूम था और वह मर्दाने को छुड़ाने के लिए आ रहे थे।

कौडा अभी आग जला ही रहा था कि गुरु जी आ पहुँचे। इस पर कौडा बहुत घबरा उठा। गुरु जी ने उसकी तरफ दया और मेहर की नज़र से देखा और कहा, "कौडा, तू नहीं जानता कि तू क्या कर रहा है। क्या तू नरक की आग में अपने आप को फेंकेगा ?" इलाही गुरु की मेहर से भरी और पावन नज़र ऐसे लोगों को अपना दोष अनुभव करवा देती थी और वे उनके चरणों में गिर पड़ते थे और रहम की भीख मांगते थे। कौडा जिसका अंतःकरण घोर अपराधों से मर चुका था, एकाएक उसे अनुभव हुआ और वह पश्चाताप करने लगा। वह गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा और रहम के लिए विनती करने लगा। कृपा निधान गुरु जी ने उसे 'नाम' का दान दिया। कौडा बिलकुल नया मनुष्य बन गया और उसके बाद गुरु जी का श्रद्धालू शिष्य बनकर जीवन यापन करने लगा।

गुरु जी का जगन्नाथ पुरी में आगमन :

गोलाघाट नगर और धनासरी वादी, जहाँ बहुत सारे मानुषखोर रहा करते थे, से गुजरते हुए गुरु जी गुवाहटी की ओर लौट गये। वहाँ से वे शिलांग और उससे आगे सिलहट, जहाँ उनकी याद में एक पुराना गुरद्वारा स्थित है, की ओर गये। इसके बाद गुरु जी ढाका गये और राह में कलकत्ता और कटक में से होकर जगन्नाथपुरी पहुँचे।

जगन्नाथ का मंदिर हिंदुओं के चार सबसे अधिक सम्मानित मंदिरों में से एक था। शेष तीन मंदिर थे– सोमनाथ, बद्रीनाथ और विश्वानाथ। कहा जाता है कि जगन्नाथ की मूर्ति देवताओं के संगतराश ने घड़ी थी और ब्रह्मा ने इस मंदिर में उस मूर्ति की स्वयं स्थापना की। जब गुरु नानक मंदिर पहुँचे, उस समय मूर्ति की स्थापना का वार्षिक दिवस था। गुरु जी मंदिर की ओर मूर्ति की पूजा करने के लिए नहीं, बल्कि लोगों को शिक्षा देने के लिए गये थे कि अकाल पुरुख की पूजा देवता की पूजा से उत्तम है। संध्या का समय हो गया था। पुजारी एक बड़ा चांदी का थाल जिसमें बहुत सारे जलते हुए दीये, पुष्प, धूप और मोती रखे हुए थे, लेकर आये। तभी, सभी लोग उठ खड़े हुए, देवता की मूर्ति के सम्मुख थाल लेकर आरती करने के लिए। प्रमुख पुजारी ने गुरु जी को देवता की पूजा में शामिल होने के लिए कहा। पर, गुरु जी शामिल न हुए जिससे पुजारियों को क्रोध आ गया। जब उन्होंने गुरु जी से पूजा में शामिल न होने का कारण पूछा, तो गुरु जी ने समझाया कि प्रभु के आगे कुदरत की ओर से अद्भुत नाद का गायन हो रहा है। गगन रूपी थाल में सूरज और चन्द्रमा रूपी दो दीये जल रहे हैं और मलयान पर्वतों की ओर से सुगन्धी के झोंके धूप(अगरबत्ती) का कार्य कर रहे हैं। इस तरह अकाल पुरुख की आरती हो रही है। सो, गुरु जी ने प्रमुख पुजारी के निमंत्रण के स्थान पर आकाश की ओर आँखें उठाकर इस 'शबद' का उच्चारण किया :

"गगन मै थालु रवि चंदु दीपक
बने तारिका मंडल जनक मोती।
धूपु मलयानलो[13] पवणु चवरो
करे सगल बनराइ फूलंत जोती। 1 ।
कैसी आरती होइ भवखंडना तेरी आरती।
अनहता शबद वाजंत भेरी। 1 । रहाउ।
सहस तव नैन नन नैन है तोहि
कउ सहस मूरति नना एक तेही
[14]सहस पद बिमल पद नन एक
पद गंध बिनु सहस तव गंध इव चलत मोही।
सभ महि जोति जोति है सोइ।
तिस कै चानणि सभी महि चानणु होइ।
गुर साथी जोति परगटु होई।
जो तिसु भावै सु आरती होइ।
हरि चरण कमल मकरंद लोभित
मनो अनदिनो मोहि आही पियासा।
कृपा जलु देहि नानक सारिंग[15]
कउ होइ जा ते तेरै नामि वासा। 4 ।"

(धनासरी महल्ला 1, आरती, पृष्ठ 663)

गुरु जी संगलादीप (श्रीलंका) में :

पुरी से गुरु जी आधुनिक आंध्रा प्रदेश के कांचीपुरम जिले के गंतूर शहर और वहाँ से तिरुवन्नामलाई और तिरुचीरूपल्ली गये। गुरु जी के आगमन की याद में इन सब स्थानों पर गुरुद्वारे बने हुए हैं। तिरुचीरूपल्ली से
गुरु जी नाव में बैठकर कावेरी नदी की ओर जाकर नागापट्टनम पहुँचे, जो दक्षिण भारत का एक बड़ा पुराना बन्दरगाह है। यहाँ से गुरु जी संगलादीप(श्रीलंका) की ओर चल पड़े और इस टापू में बेटीकोला

सबसे पहला स्थान है, जहाँ पर गुरु जी ठहरे। वहाँ से मटियाकलम (अब जिसका नाम मटलाई है) गये, जो राजा शिवनाभ के अधीन संगलादीप की राजधानी थी।

भाई मनसुख जो एक व्यापारी था और गुरु जी का शिष्य था, गुरु जी की संगलादीप यात्रा से बहुत समय पहले अपने व्यापार के सम्बन्ध में यहाँ आया था। अपने व्यापार की खातिर भाई मनसुख राजा शिवनाभ से मिला करता था और इस तरह उसने राजा को गुरु नानक जी के बारे में बता रखा था। राजा ने पूछा था कि वह गुरु जी के दर्शन किस तरह कर सकता था। मनसुख ने बताया था, "प्रातःकाल उठकर मूलमंत्र का पाठ किया करो। अगर आप सच्चे दिल से अरदास करोगे, तो गुरु जी अवश्य आपकी प्रार्थनाओं का उत्तर देंगे।"

राजा शिवनाभ हर रोज सवेरे पाठ करता और गुरु जी के पवित्र दर्शन के लिए प्रार्थना करता था। समय बीतता गया, पर गुरु जी के दर्शन नहीं हुए। कई लोग आये और अपने आप को गुरु बताया, पर सभी झूठे दावेदार निकलते। एक दिन राजा को खबर मिली कि एक महात्मा पुरुष जिनके चेहरे से अनुपम तेज छलक रहा है, आये हुए हैं और पुराने उपेक्षित बाग में ठहरे हुए हैं, और जैसे ही उनके कदम बाग में पड़े वहाँ सूखे पड़े, वृक्ष हरे–भरे हो गये हैं।

पिछले झूठे दावेदारों के कारण राजा ने ऐसे पुरुषों की परख के लिए एक योजना बनायी थी और सोचा था कि परखने के बाद ही, वह किसी के आगे अपना सिर झुकायेगा। अतः राजा ने नये आये महापुररुष के लिए सुन्दर लड़कियाँ भेजीं, ताकि वे अपनी सुन्दरता के आकर्षण में उसे भटका सकें। राजा को खबर दी गई कि वे लड़कियाँ नये आये महापुरुष को भटकाने में सफल नहीं हो सकीं, बल्कि वे महापुरुष के प्रभाव से स्वयं ही बदल गई हैं। यह सुनकर राजा पवित्र महापुरुष के दर्शन के लिए दौड़कर आया। उसे देखते ही वह अपने आप ही महापुरुष के चरणों में गिर पड़ा। गुरु जी ने उसके सिर पर हाथ फेरा और आशीर्वाद दिया। अपार प्रसन्नता जो राजा के चेहरे पर छा गई थी, उसका वर्णन कोई नहीं कर सकता।

सारे शहरवासी गुरु जी के दर्शनों के लिए दौड़े आए। जिस स्थान पर गुरु जी हर रोज संगत लगाते और अपने ईश्वरीय सन्देश का प्रचार करते थे, वहाँ एक धर्मशाला का निर्माण किया गया। अकाल पुरुख का नाम जपने से लोगों को ज्ञान हो गया और वे गुरु जी के शिष्य बन गये।

संगलादीप से वापसी :

उस समय दक्षिण भारत में शिव की मूर्ति की पूजा बहुत प्रचलित थी। शिवलिंग के 12 मंदिर थे जिनमें से छः दक्षिण में थे। दक्षिणी भारत जाति प्रथा में जकड़ा हुआ था। गुरु नानक जी को इन सभी स्थानों पर जाना पड़ा, लोगों को शाश्वत सत्य अर्थात एक निरंकार अकाल पुरुख की पूजा की राह बताने के लिए। यह मूर्तियों की पूजा से अच्छा और लाभदायक रास्ता था।

संगलादीप में कुछ समय (शायद एक वर्ष) ठहरने के बाद गुरु जी वापस आते हुए कोचीन पहुँचे। यहाँ गुरु जी की याद में एक गुरद्वारा है। गुरु जी दिव्य सन्देश देते हुए पालघाट, नीलगिरी पर्वत, रंगापटन से होते हुए पंधारपुर पहुँचे। सन्त नामदेव, जिनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित है, ने अपने जीवन का बहुत सारा समय यहाँ व्यतीत किया। यहाँ से चलकर गुरु जी बरसी पहुँचे, जो भगत त्रिलोचन जी का जन्म–स्थान है, जिनके दो शबद गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं। वहाँ से चलकर गुरु जी पूना, अमरनाथ, नासिक, औरंगाबाद से होते हुए अमरेश्वर पहुँचे, जहाँ ओंकार नामक प्रसिद्ध मंदिर है। यहाँ शिवलिंग की पूजा प्रभु की पूजा समझी जाती थी। लोग संस्कृत को देवताओं की भाषा समझते थे और संस्कृत सीखना पवित्र कार्य समझा जाता था।

गुरु जी ने मूर्ति पूजा के विरुद्ध उपदेश दिया और केवल एक अकाल पुरुख निराकार की पूजा के लिए जोर दिया। गुरु जी ने ओंकार मंदिर में जो उपदेश दिया, वह गुरु ग्रंथ साहिब में रामकली राग के तहत 'दक्खिनी ओंकार' शीर्षक से पृष्ठ 929 पर दर्ज है।

फिर गुरु जी इंदौर, उज्जैन, बड़ौदा होते हुए पालीतना पहुँचे, जहाँ एक प्रसिद्ध जैन मंदिर था। जैनी साधू कई–कई दिन नहाते नहीं थे, यह सोचकर कि नहाने से पानी के अन्दर के कुछ जीव मर जाते हैं। यहाँ गुरु जी ने अम्भी नामक एक जैनी साधू से विचार–विर्मश किया। उन्होंने साधू को समझाया कि पानी से दूर रहने से कोई धार्मिक लाभ नहीं होगा, बल्कि अकाल पुरुख की पूजा ही एकमात्र राह है।

गुरु जी उस इलाके में स्थित सभी प्रसिद्ध हिंदू तीर्थों में गये और एकमात्र अकाल पुरुख की आराधना करने और उसके सिवाय किसी और को नहीं मानने का सन्देश दिया। गुरु जी सोमनाथ, सुधाना, पुरी और द्वारका गये। काठियावाड़ से कच्छ और चित्तौड़ के रास्ते वह अजमेर पहुँचे। वहाँ एक प्रसिद्ध मुसलमान सन्त ख्वाजा मै–उ–दीन चिश्ती रहता था, जिसने अजमेर में 70 वर्ष तक इस्लाम का प्रचार किया। जब गुरु जी वहाँ पहुँचे, तो यह ख्वाजा की याद मनाने का दिन था और मुसलमान एकत्र होए हुए थे। गुरु जी ने मुसलमानों को मकबरों की पूजा करने से मना किया और केवल एक अकाल पुरुख की पूजा करने का उपदेश दिया।

इसके बाद, गुरु जी दिल्ली आये और मजनूं का टीला में ठहरे। यहाँ यमुना नदी के किनारे एक गुरद्वारा स्थित है। हर साल अप्रैल में इस स्थान पर वैशाखी का 'गुरपर्व' मनाया जाता है। यहाँ से गुरु जी पानीपत गये, जहाँ वह एक मुसलमान महात्मा शेख शरफ या ताहर से मिले और उसको सन्तों, फकीरों की कब्रों की पूजा करने के बदले केवल परिपूर्ण अकाल पुरुख की पूजा करने के लिए जोर दिया।

पेहवा में से होते हुए गुरु जी कुरुक्षेत्र[16] पहुँचे, जहाँ महाभारत की कौरवों और पांडवों के बीच प्रसिद्ध लड़ाई हुई थी। जब गुरु जी कुरुक्षेत्र आये, वह सूर्य–ग्रहण का दिन था। हजारों लोग जिनमें अधिकांश ब्राह्मण और महात्मा पुरुष थे, वहाँ एकत्र हुए। हिंदू सूर्य–ग्रहण के समय कुरुक्षेत्र जाने, वहाँ पवित्र सरोवर में स्नान करने और ब्राह्मण पुजारियों को दान देने को पुण्य समझते हैं। हिंदुओं के विश्वास के अनुसार सूरज को ग्रहण तब लगता है, जब सूरज देवता को उसके शत्रु कष्ट देते हैं। ग्रहण के समय कोई भी कुछ नहीं खाता।

गुरु जी ने वहाँ भूले हिंदुओं को समझाया कि ग्रहण प्रकृति का केवल एक कर्म है, और कुछ नहीं। गुरु जी सरोवर तट के पास बैठ गये और जब सूरज को ग्रहण लग गया, तो गुरु जी ने एक हिरन, जिसे कुँवर राय सिंह[17] शिकार करके लाया था और गुरु जी को भेंट में दे गया था, का मांस पकाना शुरू कर दिया। लोगों का बहुत बड़ा समूह गुरु जी के आसपास इकट्ठा हो गया, क्योंकि मांस पकाना हिंदुओं के लिए एक पाप था। नानू नामक ब्राह्मण के कहने में आकर ब्राह्मण गुरु जी को घेर कर, डंडे मार–मार कर उन्हें खत्म करने के लिए तैयार थे। गुरु जी उठ खड़े हुए और बचन करने लगे। गुरु जी के बचनों ने जादू का काम किया और सारा समूह मंत्रमुग्ध–सा खड़ा रहा। गुरु जी ने उस समय इन दो 'शबदों' का उच्चारण किया :

"पहिलां मासहु निम्मिया मासै अंदरि वासु।
जीउ पाइ मासु मुहि मिलिया हडु चम्मु तनु मासु।
मासहु बाहिर कढिया मम्मा मास गिरासु।
मुहु मासै का जीभ मासै की मासै अंदरि मासु।
वडा होआ वीहाहिया घरि लै आया मासु।
मासहु ही मासु ऊपजै मासहु सभो साकु।
सतिगुरि मिलियै हुकमु बुझीयै तां को आवै रासि।
आपि छुटे नह छूटीयै नानक बचनि बिणासु। 1 ।"

(वार मलार की, श्लोक महल्ला 1, 25–1, पृष्ठ 1289)

फिर, दूसरा शबद :

"मासु मासु करि मूरखु झगड़े ज्ञानु ध्यानू नहीं जाणै।
कउणु मासु कउणु सागु कहावै किसु महि पाप समाणे।
गैंडा मारि होम जग कीये देवतिया की बाणे।
मासु छोडि बैसि नकु पकड़हि राती माणस खाणे।
फडु करि लोकां नो दिखलावहि ज्ञानु ध्यानू नहीं सूझै।

नानक अंधे सिउ किआ कहीयै कहै न कहिया बूझै।
अंधा सोइ जि अंधु कमावै तिसु रिदै सि लोचन नाही।
मात पिता की रकतु निपन्ने मछी मासु न खांही।
स्त्री पुरखै जां निसि मेला ओथै मंधु कमाही।
मासहु निम्मे मासहु जम्मे हम मासै के भांडे।
ज्ञानू ध्यानू कछु सूझै नाही चतुरु कहावै पांडे।
बाहर का मासु[18] मंदा सुआमी घर का मासु चंगेरा।
जीअ जंत सभि मासहु होए जीइ लइया वासेरा।
अभखु भखहि भखु तजि छोडहि अंधु गुरु जिन केरा।
मासहु निम्मे मासहु जम्मे हम मासै के भांडे।
ज्ञानू ध्यानू कछु सूझै नाही चतुरु कहावै पांडे।
मासु पुराणी मासु कतेबी चहु जुगि मासु कमाणा।
जजि काजि वीआहि सुहावै ओथै मासु समाणा।
स्त्री पुरख निपजहि मासहु पातिसाह सुलताना।
जे ओइ दिसहि नरकि जांदे तां उन का दानु न लैणा।
देंदा नरकि सुरगि लैदे देखहु एहु धिङाणा।
आपि न बूझै लोक बुझाये पांडे खरा सिआणा।
पांडे तू जाणै ही नाही किथहु मासु उपन्ना।
तोइअहु अन्नु कमादु[19] कपाहां होइअहु त्रिभवण गन्ना।
तोआ आखै हउ बहु बिधि हछा तोअै बहुत बिकारा।
ऐते रस छोडि होवै सन्यासी नानक कहै विचारा। 2 ।"

(वार मलार की, महल्ला 1, 25–2, पृष्ठ 1289-90)

गुरु जी का सरसा जाना :

कुरुक्षेत्र से चलकर गुरु जी जींद में से होकर गुजरे, जहाँ उनकी याद में एक गुरद्वारा है और फिर सरसा पहुँचे, जहाँ वह एक मुसलमान पीर को मिले। इस पीर का अपने श्रद्धालुओं पर बड़ा प्रभाव था और उसने उन्हें स्वर्ग में स्थान दिलाने की गारंटी दे रखी थी। इस गारंटी के कारण पीर को उसके श्रद्धालू बड़ी–बड़ी रकमें नकद देते थे और दूसरी वस्तुएँ भेंट करते थे। गुरु जी ने उन्हें समझाया कि मुक्त होने के वास्ते वह एक अकाल पुरुख की पूजा करें, केवल चढ़ावे (जो वे पीर को दिया करते थे) उन्हें कोई लाभ नहीं पहुँचाएँगे।

गुरु जी का सुल्तानपुर जाना :

सुल्तानपुर सरसा से लगभग 135 मील उत्तर–पूरब की ओर था और गुरु जी आठ वर्ष बाद और छह हजार मील से भी अधिक पैदल का सफ़र तय करके सुल्तानपुर पहुँचे। उनकी बड़ी बहन बीबी नानकी जी और उसके पति और अन्य परिचित लोग गुरु जी को वापस आया देखकर बहुत खुश हुए।

गुरु जी का घर लौटना :

कुछ समय सुल्तानपुर में रहकर गुरु जी तलवंडी की ओर चल दिये। उनके पिताजी की आयु अब 75 वर्ष के करीब हो चुकी थी। उन दिनों में कोई डाक सेवा तो थी ही नहीं। वृद्ध माता–पिता गुरु जी की वापसी की प्रतीक्षा कर रहे थे। आखिर, उनका सुपुत्र घर लौटकर आया और उनकी खुशी की कोई सीमा

नहीं थी। दूर–पास से लोग गुरु जी के पवित्र दर्शन करने आये। लोगों ने गुरु जी की संगत फिर से मिल जाने की खुशियाँ मनानी आरंभ कर दीं। उस समय गुरु जी की पत्नी और बच्चे गुरु जी की ससुराल पखोकी में थे, जो लाहौर की दिशा में करीब 110 मील दूर था। सो, गुरु जी उनसे मिलने के लिए चल दिये। पखोकी गाँव का चौधरी अजिता था। उसने गुरु जी के बारे में सुन रखा था, पर उनसे पहले कभी मिला नहीं था। वह अब गुरु जी के पवित्र दर्शन करके इतना प्रभावित हुआ कि एकदम गुरु जी का शिष्य बन गया।

करतारपुर की नींव :

कई लेखकों का विचार है कि गुरु जी ने करतारपुर नगर अपनी तीसरी उदासी(यात्रा) के बाद बसाया था। दूसरों का विश्वास है कि गुरु जी ने सन् 1515 में अपनी पहली यात्रा से लौटते ही करतारपुर में रहना–बसना सन् 1516 में आरंभ करवा दिया था। यद्यपि गुरु जी जहाँ–जहाँ भी गये, वहीं–वहीं वह प्रचार केन्द्र स्थापित करते गये, फिर भी वह एक ऐसा केन्द्र स्थापित करना चाहते थे, जहाँ वह अपने मिशन के यत्नों और कार्यों को समन्वित कर सकें। सो, उन्होंने पखोकी के करीब रावी नदी के किनारे यह स्थान चुना। जब उन्होंने चौधरी अजिता को यह बताया, तो वह उसी समय गुरु जी से सहमत हो गया। चौधरी और उसके गाँव के बहुत सारे लोगों ने यह नया नगर बसाने के लिए अपनी जमीनें भेंट कर दीं। करतारपुर की नींव उसी समय आरंभ हुई। गुरु जी अपने माता–पिता को करतारपुर ले आये और मरदाना भी अपने माता–पिता को ले आया। सुबह–शाम संगत का जुड़ना आरंभ हो गया।

दूसरी उदासी (यात्रा) :

करतारपुर को बसाने के बाद, गुरु जी उत्तर की ओर अपनी दूसरी यात्रा पर चल पड़े। उनका पहला पड़ाव करतारपुर से लगभग 50 मील पूरब
में सियालकोट[20] नगर में था। जब मुसलमान हमलावरों ने भारत में अपना राज्य कायम कर लिया, उसके बाद बहुत सारे मुसलमान फकीर (महात्मा और प्रचारक) भी उनके साथ आ गये। इन फकीरों ने इस्लाम का प्रचार करने के लिए भिन्न–भिन्न स्थानों पर अपने प्रचार केन्द्र स्थापित किए। उनके प्रचार कार्यों के कारण हिंदुओं की बहुत बड़ी संख्या ने इस्लाम धारण कर लिया। इन फकीरों में से एक हमज़ागोश फकीर ने अपना केन्द्र सियालकोट में बनाया हुआ था। नगर में एक हिंदू परिवार रहता था, जिसकी कोई औलाद नहीं थी। यह सोचकर कि इस पीर के पास करामातों की शक्ति है, उस परिवार के मुखिया ने पीर से एक बेटे का दान मांगा। उसने वचन दिया कि अगर उसके घर में पुत्र पैदा हुआ, तो वह उस पुत्र को पीर को सौंप देगा। अकाल पुरुख की मेहर हुई और पुत्र पैदा हुआ, पर उसने अपना वचन पूरा नहीं किया और पुत्र पीर को भेंट नहीं किया। इस पर पीर को बेहद क्रोध आया और यह कहकर कि इस शहर में सारे झूठे लोग बसते हैं, उसने इसे बदले की भावना से तबाह करना चाहा। ऐसा करने के लिए उसने एकान्त में बैठकर चालीस दिनों का व्रत धारण कर लिया। लोग भयभीत हो उठे, पर पीर के चेलों ने किसी को भी उसके पास न आने दिया।

गुरु जी उस स्थान के करीब बैठ गये और मरदाने को रबाब बजाने को कहकर उन्होंने पवित्र 'शबद' का गायन आरंभ कर दिया। इससे पीर इतना काँप उठा कि अपना व्रत तोड़ने के लिए विवश हो गया। जैसे–जैसे 'शबद' के माध्यम से उसने अकाल पुरुख की महिमा और आराधना सुनी, वह शान्त हो गया और गुरु जी के सम्मुख आ बैठा। गुरु जी ने पीर को समझाया कि एक मनुष्य की गलती के कारण सारे शहर को बरबाद करना कोई उचित बात नहीं। पीर हमज़ा गोश के दिल ने इस सत्य को जाना। इस तरह, उसने बदले
की भावना के तहत शहर को बरबाद करने का विचार त्याग दिया। यहाँ गुरु जी की कीर्ति की खातिर एक गुरद्वारा है।

वहाँ से गुरु जी जम्मू और वैष्णों देवी के मंदिर की ओर चल पड़े। अपने सत्य के मत का प्रचार करते हुए गुरु जी वैरी नाग, कुकड़ नाग और अनंत नाग के चश्मों से होते हुए पहलगाम और फिर अमरनाथ, जो श्रीनगर से लगभग 90 मील पूरब की ओर है, पहुँचे। हिंदू अमरनाथ में शिवलिंग की पूजा करते थे। गुरु जी ने उनके साथ मूर्तिपूजा की निरर्थकता के बारे में विचार–विर्मश किया और केवल एक अकाल पुरुख की पूजा का उपदेश दिया। अमरनाथ से कुछेक मील पहले मटन साहिब नाम का गुरद्वारा है।

श्रीनगर में ब्रह्मदास नाम का एक बड़ा विद्वान पंडित रहता था, जिसके पीछे–पीछे कुछ ऊँट जिन पर पुरातन ज्ञान के ग्रंथ लदे हुए होते, हमेशा साथ जाते थे। इसका मतलब था कि उन धार्मिक ग्रंथों में अंकित ज्ञान पर उसकी पूरी महारत है। उसे पता चला कि एक महात्मा और महान गुरु कश्मीर की वादी में आया हुआ है और बहुत लोग उसकी कृपा का दान लेने के लिए गये थे। पहले उसने गुरु जी के पास जाने का विचार बनाया, पर फिर उसे अपने ज्ञान के अंहकार ने रोक दिया। एक दिन पंडित अपने मित्र कमाल से मिलने गया और वादी में आये हुए एक अद्‌भुत व्यक्ति(गुरु नानक जी) के बारे में जिक्र किया।

कमाल एक धार्मिक मुसलमान और सच की खोज करने वाला व्यक्ति था। वह बिना किसी झिझक के गुरु नानक जी के दर्शन करने गया। जब उस पर गुरु जी के दर्शन की झलक पड़ी, वह गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा और मारे खुशी के बेसुध हो गया। जैसे ही, उसे होश आया, उसे अपने ह्रदय में वह प्रकाश दिखाई दिया, जिसके लिए वह वर्षों से व्याकुल हो रहा था। कमाल पर गुरु जी की मेहर हुई और वह गुरु जी का शिष्य बन गया। गुरु जी ने उसे कुर्रम वादी में रहते हुए काबुल, कंधार और तीरा में उनके सच के सिद्धान्त का प्रचार–प्रसार करने का आदेश दिया।

इसके बाद ब्रह्मदास भी गुरु जी के दर्शन करने के लिए आया। वह गुरु जी के साथ बहस करने लग पड़ा और पुरातन ज्ञान के बारे में अपनी विद्ववता का मान जताने लगा। गुरु जी ने उसके पुस्तकों से लदे हुए ऊँटों की ओर देखते हुए इस 'शबद' का उच्चारण किया :

"पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ।
पड़ि पड़ि बेडी पाईयै पड़ि पड़ि गडीअहि खात।
पड़ीअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास।
पड़ीयै जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास।
नानक लेखै इक गल होरु हउसै झखणा झाख। 1 ।"

(आसा, महल्ला 1, श्लोक महला 1, 1, 9, पृष्ठ 467)

यह 'शबद' सुनकर ब्रह्मदास ने विनती की, "हे महान गुरु जी, मैंने आपके धार्मिक ग्रंथ पढ़े हैं और दर्शन के सभी छह मार्गों का शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त किया है, पर मैं अब मानता हूँ कि मेरे मन को कोई शान्ति नहीं मिली, कृपा करो, बताओ कि इसे कैसे प्राप्त करुँ।"

गुरु जी ने समझाया, "शास्त्रीय ज्ञान अंहकार को जन्म देता है और अंहकार मनुष्य को अंधा कर देता है। अहं सबसे बड़ी रुकावट है और जब तक मनुष्य इससे छुटकारा न पाये, उसे सच की प्राप्ति नहीं होती और न ही मन को शान्ति मिल सकती है।" ब्रह्मदास गुरु जी के चरणों में ढेरी हो गया और प्रार्थना करने लगा, "हे महान गुरु जी, मैं अंधेरे में हूँ और पापी हूँ, मुझे शान्ति का दान बख्शो।" ब्रह्मदास पर मेहर हुई और वह गुरु जी का शिष्य बन गया। गुरु जी ने उसे कश्मीर वादी में सिक्खी का प्रचार करने का आदेश दिया।

गुरु जी का कैलाश पर्वत जाना :

अमरनाथ से गुरु जी ने तिब्बत में प्रवेश किया और मानसरोवर झील और कैलाश पर्वत (जिसे सुमेर पर्वत भी कहते हैं) की ओर चल पड़े। वहाँ गुरु जी बहुत सारे सिद्धों से मिले। उन्होंने गुरु जी से भारत में चल रही स्थिति के बारे में पूछा। गुरु जी ने बताया कि वहाँ सब ओर अज्ञान पसरा हुआ है और सच का चन्द्रमा अज्ञान के अंधेरे में पूरी तरह से छिप गया है। राजा कसाई हो गये हैं और न्याय पंख लगाकर बहुत

दूर उड़कर चला गया है। फिर, गुरु जी ने दूसरा वचन किया कि "नाथ जी, जब सिद्ध (जोगी) पहाड़ों की कंदराओं में छिपे बैठे हैं, फिर, देश में लोगों को सही राह दिखलाने वाला भला कौन बचा है ?"

सिद्ध चाहते थे कि गुरु जी उनकी तरह वस्त्र पहनकर उनके बीच रच–बस जाएँ, पर वे सफल नहीं हुए। उनके पास रिद्धियों–सिद्धियों की अलौकिक शक्तियाँ थीं, जिन्हें गुरु जी पर प्रयोग किया। उन्होंने गुरु जी को नज़दीक के एक चश्मे से पानी लाने के लिए कहा। गुरु जी एक लौटा लेकर पानी लाने लगे। सिद्धों ने अपनी शक्ति से उस पानी को, हीरे–जवाहरातों में बदल दिया। उन्होंने सोचा कि गुरु जी ऐसे धन को देखकर पसीज जाएँगे। गुरु जी ने हीरे–जवाहरात की परवाह न की और खाली लौटा लेकर वापस आ गये। सिद्धों ने और बहुत से कौतुक किये, पर वे सफल न हुए। आखिर, उन्होंने गुरु जी की बड़ी शक्तियों को मान लिया और हारकर गुरु जी के करीब आ बैठे और गुरु जी से चर्चा करने लगे।[21] गुरु जी ने उन्हें विश्वास दिला दिया कि खोखले वस्त्र पहनने और अपने शरीर को सख्त कष्ट देने के बदले, वे मनुष्य जाति की सेवा में शक्ति लगायें। चरपट नामक एक सिद्ध ने प्रश्न किया :

"दुनीया सागरु दुतरु कहीयै किउ करि पाईयै पारो।
चरपुट बोलै अउधू नानक देहु सचा बीचारो।"

(रामकली महल्ला 1, सिद्ध गोष्ठी, पृष्ठ 938)

जगत एक पार न किया जाने वाला समुंदर कहा जाता है। आदमी किस तरह इससे पार हो सकता है। "हे निरलेप नानक! इसका उत्तर दो?"

गुरु जी ने उत्तर दिया :

"जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नैसाणै।
सुरति सबदि भव सागरु तरीयै नानक नामु वखाणे।
रहहि इकांति ऐको मनि वसिया आसा माहि निरासो।
अगमु अगोचरु देखि दिखाए नानकु ता का दासो।। 5 ।।"

(उही, सिद्ध गोष्ठी, पृष्ठ 938)

जिस तरह कंवल का फूल पानी में निर्लिप्त रहता है (अगर वह पानी में डूब जाये तो खत्म हो जाएगा), जिस तरह मुरगाबी नदी के बहाव के सामने तैरती है, पर अपने पंख भीगने नहीं देती (अगर पंख भीग गये तो खत्म हो जाएगी), इसी तरह गृहस्थ आश्रम में रहते हुए माया से निर्लिप्त होकर गुरबाणी के अर्थों में ध्यान लगाये और इस तरह नाम का उच्चारण करने से हे नानक! भयानक संसार से पार हो जाते हैं।

एक अन्य जोगी ने पूछा :

"कवण मूलु कवण मति वेला।
तेरा कवणु गुरु जिस का तू चेला।"

(उही, पृष्ठ 942)

तेरा असल क्या है(जीवन का आरंभ क्या है ?), किस मत को मानने वाला है ? तेरा कौन गुरु है जिसका तू चेला है ?

गुरु जी ने उत्तर दिया :

"पवन अरंभु सतिगुरु अति वेला।
सबदु गुरु सुरति धुनि चेला।"

(उही, पृष्ठ 943)

हजूर ने उत्तर दिया कि जिस शक्ति ने पवन को बनाया है, वह मेरा मूल है। उस सतगुरु से जो मुझे शबद आ रहा है, वह शबद मेरा गुरु है और उस शबद की ध्वनि में ध्यान लगाना ही शिष्यता है।

इस इलाके के कुछ मंदिरों में गुरु नानक जी की मूर्तियाँ हैं। कैलाश पर्वत से गुरु जी उत्तर–पश्चिम की ओर चल पड़े और चासूल दर्रे के रास्ते लद्दाख के इलाके में दाखिल हुए और फिर कारूनगर पहुँचे। इस स्थान की एक अलौकिक बात यह है कि इसके आसपास थोड़े से गाँव हैं, जहाँ गुरु नानक जी के अलावा और किसी की पूजा नहीं होती। यहाँ से कुछ ही दूरी पर 'गुफा हेमस' नाम की एक

जगह है, जहाँ गुरु नानक जी की आमद की याद ताजा है। यहाँ लोगों ने एक पत्थर को संभाल कर रखा हुआ है। लोगों का विश्वास है कि गुरु जी यहाँ पर बैठे थे। वहाँ से गुरु जी सकरदू आये, जहाँ पर गुरु जी के नाम पर एक गुरद्वारा है। वहाँ से गुरु जी कारगिल, पहलगाम, अनंत नगर, श्रीनगर, बारामूला गये और फिर करतारपुर वापस लौट आये।

कश्मीर विद्वान पंडितों(ब्राह्मणों) का केन्द्र रहा था। इसी कारण यह इलाका मूर्तिपूजा और इससे सम्बन्धित अन्य रीतियों–रस्मों में अत्यंत उलझा हुआ था। गुरु जी ने अकाल पुरुख की आराधना करने का प्रचार किया और जोर दिया कि एक अकाल पुरुख के सिवाय अन्य किसी की आराधना, पूजा नहीं करनी चाहिए। उन्होंने इसके साथ–साथ यह भी दष्ढ़ करवाया कि अन्य रीतियों–रस्मों का कोई लाभ नहीं। पंडित ब्रह्मदास जो गुरु जी का शिष्य बन गया था, ने कश्मीर वादी में गुरु नानक जी के सिद्धान्त का प्रचार करने के लिए बड़ी सेवा की।

तीसरी यात्रा :

गुरु जी ने अपनी तीसरी यात्रा पश्चिम की ओर की। गुरु जी पाकपटन (अजोधन) पहुँचे, जहाँ वह शेख ब्रह्म से मिले जो बाबा फरीद जी (जिनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित है) के ग्यारहवें उत्तराधिकारी थे। गुरु जी ने उसके साथ विशाल विचार–विमर्श किया। गुरु जी ने कहा :

"आपे पटी कलम आपि उपरि लेख भि तूं।
ऐको कहीयै नानका दूजा काहे कू।"

(वार मलार की, महल्ला 1, 28–2, पृष्ठ 1291)

शेख ने गुरु जी से स्पष्ट करने के लिए विनती की, "आप कहते हैं कि केवल एक ही अकाल पुरुख है, दूसरा कोई नहीं होना चाहिए।" मैं कहता हूँ :

"खुदा एक है और राह दो हैं,
कौन सा अपनाऊँ और कौन सा नामंजूर करुँ ?"

गुरु जी ने उत्तर दिया :

"अकाल पुरुख केवल एक ही है और एक ही राह,
एक को अपना लो और दूसरे को अपरवान(अस्वीकार) करो।"

एक 'वार' में (जैसे 'आशा की वार') में दो व्यक्ति होने ज़रूरी हैं, और शेख ने गुरु जी को अकाल पुरुख की महिमा में कोई गीत सुनाने के लिए विनती की। शेख ने कहा, "मेरा विचार है कि दो हस्तियों के बिना आराधना नहीं की जा सकती, अर्थात् एक खुदा और एक पैगम्बर। मुझे बताओ कि आप किसको आदमी का मध्यस्थ बनाओगे।" इस पर, गुरु जी ने मरदाने को रबाब बजाने के लिए कहा और 'आशा की वार' के पहले श्लोक और पउड़ी का गायन किया :

"बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सद वार।
जिनि माणस ते देवते कीये करत न लागी वार।1।
नानक गुरु न चेतनी मनि आपणै सुचेत।
छुटे तिल बूआड़ जिउ सुन्जे अंदरि खेत।
खेतै अंदरि छुटिया कहु नानक सउ नाह।
फलीअहि फुलीअहि बपुड़े भी तन विचि सुआह।3।"
पउड़ी।
आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ।
दूयी कुदरति साजीयै करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ।
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ।
करि आसणु डिठो चाउ।"

(आसा, महल्ला 1, पृष्ठ 462–63)

तब शेख ने गुरु जी से एक छुरी मांगी, "मुझे ऐसी एक छुरी दो कि जिन्हें इससे मारा जाये, तो वे खुदा को परवान होंगे। साधारण छुरी से निम्न जाति के जीव काटे जाते हैं। अगर आदमी की गर्दन भी इस छुरी से काटी जाये, तो वह मुरदार (गन्दा मांस) बन जाएगा।"

गुरु जी ने सहमति जताते हुए इस 'शबद' से उत्तर दिया :

"सच की काती सचु सभु सारु।
घाड़त तिस की अपर अपार।
शबदे साण रखाई लाइ।
गुण की थेकै विचि समाइ।
तिस दा कुठा होवै शेखु।
लोहु लथ निकथा वेखु।
होइ हलालु लगै हकि जाइ।
नानक दरि दीदारि समाइ।"

(रामकली की वार, महल्ला 1, पृष्ठ 956)

यह सुनकर शेख हैरान हुआ और उसने सिर ऊपर उठाया। कहने लगा, "नानक जी, आप ने कमाल कर दिया। आप में और खुदा में कोई फर्क नहीं। मेहर करो ताकि मैं भी उस खुदा से रसूख पा लूं।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "शेख ब्रह्म, अकाल पुरुख तुम्हारे बेड़े को सही सलामत पार लगा देगा।" शेख ने गुरु जी से विनती की कि उसे इसका पक्का कौल दें। गुरु जी ने उसे नवाजा और मुक्ति का दान दिया।

पुरातन जनम–साखी के अनुसार, 'आसा दी वार' की पहली नौ पौड़ियाँ गुरु जी ने शेख ब्रह्म से विचार–विमर्श करते समय उच्चारित की थीं और बाकी की पन्द्रह पौड़ियाँ लाहौर के दुनीचंद धुपर के लिए उच्चारित की थीं। गुरु जी मुलतान, उच, सक्खर की ओर चल पड़े और लखपत पहुँचे, जहाँ गुरु जी की याद में एक गुरद्वारा स्थित है। फिर, गुरु जी कुरिआनी आये, जहाँ एक सरोवर गुरु जी के नाम से बना हुआ है। फिर, गुरु जी मियानी आये, जो कराची शहर से 50 मील पर पश्चिम की ओर है। उस इलाके के हिंदुओं और मुसलमानों के धर्म–स्थानों (मंदिर आदि) पर वे गये। हिंगलाज के करीब गुरु जी की याद को कायम रखती एक धर्मशाला है। वहाँ पर गुरु जी एक जहाज में अरब देश में जाने के लिए चढ़े।

गुरु जी मक्का में :

गुरु जी ने एक मुसलमान यात्री की तरह नीले वस्त्र पहन लिए, हाथ में एक फकीरों वाला डंडा ले लिया और अपनी बाणी का संग्रह एक पोथी के रूप में अपनी बगल में दबा लिया। उन्होंने मुसलमान श्रद्धालुओं की तरह हाथ–पैर धोने के लिए एक लोटा और एक चटाई, जिस पर बैठकर नमाज पढ़ते हैं, भी ले लिए। हज के लिए आये यात्रियों की तरह गुरु जी भी विशाल मस्जिद के अन्दर चले गये, जहाँ यात्री नमाज अदा कर रहे थे। रात हुई तो गुरु जी सोने के लिए लेट गये, उस समय उनके पैर काबे की तरफ थे। जीवन[22] नामक एक सेवक वहाँ से गुजरा तो गुरु जी के पैर काबे की ओर देखकर गुस्से में गुरु जी को ठोकर मारते हुए बोला, "कौन काफिर है तू, जो अल्लाह के घर की तरफ पैर करके सोया पड़ा है ?" गुरु जी ने उत्तर दिया, "मेरे पैर उस तरफ कर दे, जिधर अल्लाह का घर नहीं।" यह सुनकर जीवन ने गुरु जी के पैर पकड़कर घसीटे और उलटी तरफ कर दिये। कहा जाता है कि ऐसा करते ही काबा भी घूम गया और गुरु जी के पैरों की तरह उलटी तरफ आ गया। कइयों का विचार है कि जब गुरु जी ने जीवन को उनके पैर उस तरफ करने को कहा, जहाँ ईश्वर नहीं, तो उसे ज्ञान हो गया कि अल्लाह तो हर जगह बसता है। पर जिन्होंने यह करामात देखी, वे हैरान हो गये और उन्होंने गुरु जी को एक इलाही पुरुष मानते हुए नमस्कार किया।

फिर, काज़ी और मुल्ला सभी गुरु जी के इर्दगिर्द आकर इकट्ठा हो गये और पूछने लगे कि आप मुसलमान है या हिंदू ? गुरु जी ने उत्तर दिया कि वह इन दोनों में से कोई भी नहीं है। फिर, उन्होंने पूछा कि "दोनों में कौन बेहतर है, हिंदू कि मुसलमान ?" गुरु जी ने उत्तर दिया, "अच्छे कामों के बगैर दोनों पछताएँगे। अच्छाई कर्म करने से होती है, किसी मज़हब का पैरोकार होने के कारण नहीं।" मुख्य काज़ी सच का अन्वेषी था। उसने अनुभव कर लिया और गुरु जी से कृपा करने के लिए विनती की। गुरु जी 'नाम' का प्रचार करते थे। उन्होंने काज़ी को सच्चा जीवन जीने, दिन–रात ईश्वर को याद करने और अकाल पुरुख का गुणगाण करते हुए अपने मन से पापों की मैल धोने का यत्न करने की शिक्षा दी।

गुरु जी मदीना में :

कुछ समय रुककर गुरु जी मदीना की ओर चल पड़े। यह मुसलमानों का एक अन्य पवित्र स्थान है, जहाँ पैगम्बर मुहम्मद साहिब बहुत वर्ष रहे और अकाल ज्योति में समाये। गुरु जी वहाँ पहुँचे तो रात पड़ चुकी थी। उन्होंने शहर के बाहर ही डेरा डाल लिया। इस स्थान पर कोढ़ी लोगों को अलग रखा जाता था और उनके आराम या इलाज का कोई बन्दोबस्त नहीं किया हुआ था। इतिहास में लिखा है कि गुरु जी ने सारे कोढ़ियों को ठीक कर दिया और परिणाम स्वरुप लोगों की भीड़ गुरु जी के दर्शन के लिए उमड़ पड़ी थी। यहाँ से गुरु जी का बसरे से होते हुए बगदाद की ओर सफ़र आरंभ हुआ।

गुरु जी का बगदाद आना :

बगदाद में एक बड़ा प्रसिद्ध मुसलमान फकीर पीर अब्दुल कादर रहता था, जिसकी मृत्यु सन् 1166 में बगदाद में हुई। उसे दस्तगीर भी कहा जाता था और उसके उत्तराधिकारी भी दस्तगीर कहलाते थे। मुसलमानों में प्रधान काज़ी सदाचारहीन और अनैतिक रीतियों को पसन्द किया करते थे। अख़्लाक(सदाचार) से गिराने वाली कविताओं का विरोध करने के बदले उन्होंने 'राग' के गायन पर ही पाबन्दी लगा दी। इस प्रकार, मुस्लिम शरीअत के अनुसार गाने–बजाने को वर्जित किया हुआ था। सिख धर्म में सारी गुरबाणी कविता और भिन्न–भिन्न रागों, रागनियों के रूप में रची हुई है। सुबह हुई तो गुरु जी ने ऊँचे स्वर में आराधना के वास्ते उठने को आवाज लगाई, जिससे सब लोग खामोश और हैरान रह गये। शायद, गुरु जी ने मुसलमानों के ढंग से आवाज नहीं लगाई थी। उस समय मरदाने ने रबाब बजाई और गुरु जी शबद–कीर्तन करने लगे। जिसने भी सुना वह खुशी में झूम उठा। यह खबर सारे शहर में फैल गई। प्रधान पीर दस्तगीर, एक अन्य महात्मा बहिलोल और अन्य कई गुरु जी को देखने के लिए आये।

मुसलमानों के अनुसार धरती के ऊपर सात आकाश हैं और धरती समेत सात ही पाताल हैं। गुरु जी ने जपुजी का गायन शुरू किया। जब वह बाइसवीं पौड़ी(पद) पर आये तो पीर यह सुनकर हैरान रह गया कि वह पवित्र कुरान के उलट यह बता रहे थे कि लाखों ही पाताल हैं और लाखों ही आकाश और मनुष्य उन्हें खोज–खोजकर थक गये हैं। पीर गुरु जी के पास आया और कहने लगा कि जो आप बता रहे हैं, उसे दिखाओ। इस पर, कहा जाता है[23] कि गुरु जी ने पीर के पुत्र के सिर पर हाथ रखा और उसे जपुजी की बाइसवीं पौड़ी में बताये गये आकाश और पाताल दिखाये। यह साबित करने के लिए कि लड़के ने सचमुच देखे थे, वह उनमें से एक से प्रसाद लेकर आया था, जिसे उसने अपने पिता पीर को दे दिया। पीर और बहिलोल दोनों ही गुरु जी के चरणों पर गिर पड़े और मेहर का दान मांगा।

बहिलोल गुरु जी का शिष्य बन गया। बताया जाता है कि इसने 60 साल उस शिला के सामने बिताये, जिस शिला पर, ऊपर बताये गये विचार–विमर्श के दौरान, गुरु जी के चरण टिके थे। बाद में, वहाँ एक गुरद्वारा गुरु जी की याद में बनाया गया था। उस गुरद्वारे के अन्दर शिला पर जो अंकित है, वह इस प्रकार है :

"उस इलाही उस्ताद, गुरु बाबा नानक, फकीर औलिया की याद में इस इमारत का निर्माण किया गया है, सात फकीरों की मदद से, और इस पत्तरे पर लिखा है कि बख़्शे हुए मुरीद ने मुतबर्रिक साल 917 (मुस्लिम कैलेंडर के अनुसार) में चश्मा बना दिया है।"

स्वीडन के स्वामी आनन्द आचार्य ने अपनी पुस्तक "स्नो बर्ड" जो मैकमिलन एंड सन्ज से प्रकाशित है, में बताया है कि जब वह बगदाद गया था, उसने उस शिला पर एक और लेख खुदा हुआ देखा था जिस पर 917 हिजरी तारीख अंकित थी। वह लेख इस प्रकार है :

"यहाँ हिन्दी गुरु नानक ने फकीर बहिलोल से वार्तालाप किया और
गुरु जी की इराक से विदायगी के बाद, साठ साल तक बहिलोल की रूह गुरु जी के वचनों पर ऐसे टिकी रही, मानो एक शहद की मक्खी पौ फटे के उजाले में शहद भरे गुलाब पर टिकी हो।"

बगदाद से वापसी :

बगदाद से गुरु जी ईरान, तुर्कस्तान और अफगानिस्तान से होते हुए काबुल पहुँचे। कई लेखकों का विश्वास है कि गुरु जी ने बगदाद से तेहरान, कंधार की ओर जाने वाला प्रचलित रास्ता पकड़ा और काबुल पहुँचे। रास्ते में वह महद में से गुजरे। भाई मनी सिंह की जनम–साखी में गुरु जी के इस स्थान पर आने के बारे में संकेत मिलता है। गुरु जी की काबुल यात्रा से लेकर अब तक सिखों ने उस इलाके से बहुत अच्छी प्रकार से सम्बन्ध बना रखा है। वहाँ सिख प्रचारक रखे हुए थे, जो गुरु जी के उपदेशों का प्रचार–प्रसार करते थे। एक समय भाई गुरदास[23] जी भी काबुल में सिख प्रचारक के तौर पर सेवा करते रहे थे।काबुल से गुरु जी जलालाबाद, सुल्तानपुर की ओर चल पड़े और खैबर दर्रे से होकर पेशावर पहुँचे। जलालाबाद और सुल्तानपुर में गुरु जी की आमद की याद में गुरद्वारे बने हुए हैं। उनकी यात्रा से संबंधित पानी के चश्मे भी वहाँ हैं। गुरु जी गोरख हटरी गये और वहाँ जोगियों से विचार–विमर्श किया। वहाँ से गुरु जी अबदाल आये, जो अब पंजा साहिब नाम से प्रसिद्ध है और एक पहाड़ी के पैरों में स्थित है।

गुरु नानक जी और वली कंधारी :

एक छोटी पहाड़ी की चोटी पर एक मुसलमान रहता था, जिसका नाम वली कंधारी था और उस इलाके में अपनी करामाती शक्तियों के कारण खूब प्रसिद्ध था। मरदाने को पानी की ज़रूरत पड़ी जो केवल वली के पास ही मिल सकता था। मर्दाना उसके पास गया और उसने बताया कि गुरु नानक जी आये हुए हैं, जो अल्लाह के बड़े पहुँचे हुए महात्मा हैं। मरदाने ने वली को पहाड़ी से उतरकर गुरु जी के दर्शन के लिए सलाह दी। वली अपने आप को ही रूहानियत का मालिक समझता था। गुरु जी की प्रशंसा उसे अपना अपमान लगी। उसने मरदाने को पानी देने से इन्कार कर दिया यह कहकर कि अगर गुरु इतना बड़ा महात्मा पुरुष है तो वह तुझे पानी पैदा करके दे सकता है। मरदाने से यह उत्तर सुनकर गुरु जी ने फिर से मरदाने को वली के पास भेजा, यह सन्देशा देकर कि उससे कहो कि गुरु ईश्वर का एक गरीब–सा जीव है और सन्त होने का कोई हक नहीं जताता। वली ने इसकी कोई परवाह नहीं की और इस बार भी उसने मरदाने को पानी देने से इन्कार कर दिया।

इस पर गुरु जी ने बैठे–बैठे ही अपने पास से एक पत्थर उठाया और उसी वक्त वहाँ से पानी की धारा फूट पड़ी। असल में, पानी की यह धारा वली के तालाब में से आई थी जो खाली हो गया। इस बात ने सहज ही वली के गुस्से को बढ़ा दिया और कहा जाता है कि उसने अपनी करामाती शक्तियों से पहाड़ी का एक छोटा–सा हिस्सा निर्दोष गुरु जी के सिर की ओर फेंका। गुरु जी ने ऊपर से आ रहे पहाड़ी के टुकड़े को देखकर अपना दायां हाथ ऊपर उठाया और उस टुकड़े को ज्यों ही दिव्य गुरु जी के हाथ का स्पर्श मिला, वह वहीं रुक गया। दिव्य स्पर्श मिलते ही वह पत्थर मोम की तरह नरम हो गया और गुरु जी के हाथ का गहरा अमिट निशान वहाँ पड़ गया। वली कंधारी बड़ा हैरान हुआ और आकर गुरु जी के चरणों में गिरकर माफी मांगने लगा। गुरु जी ने कहा, "ओ मित्र, जो पुरुष इतने ऊँचे स्थान पर बसते हैं, उन्हें दिल से पत्थर जैसा नहीं होना चाहिए।" वली ने गुरु जी से आशीर्वाद प्राप्त किया।

गुरु जी के पंजे का निशान उस पत्थर पर आज भी दिखाई देता है और वहाँ निर्मल स्वच्छ जल का प्रवाह अभी भी हो रहा है। इस स्थान पर 'पंजा साहिब' नाम का एक गुरद्वारा बना हुआ है। अब यह पाकिस्तान में है।

गुरु जी का सैदपुर आना :

वहाँ से गुरु जी दूसरी बार सैदपुर या सय्यदपुर आये, जो अब ऐमनाबाद नाम से जाना जाता है। यहाँ पर गुरु जी फिर भाई लालो से मिले। लालो ने गुरु जी से पठानों की ओर से हो रहे अत्याचार का गिला किया। ये पठान ऐश का जीवन बिता रहे थे और दूसरे लोगों की ज़रा भी परवाह नहीं कर रहे थे। गुरु जी ने उत्तर दिया कि इन पठानों का राज्य कुछ समय ही रहने वाला है क्योंकि बाबर भारत को फतह करने के लिए आ रहा है। बाबर ने पंजाब पर तीसरी बार हमला सन् 1521 में किया। उसने ऐमनाबाद को तबाह करके, कत्ल, लूटमार और बलात्कार किये। यह बड़ा भयानक नज़ारा था जिसका गुरु जी ने स्वयं वर्णन करते हुए बताया है कि कुँआरी और सुन्दर स्त्रियों के सिर मिट्टी में मिल रहे थे।

बहुत सारे लेखकों जिनमें कई सिख भी थे, ने कहा है कि भयानक दष्श्य देखकर गुरु जी ने अकाल पुरुख से दर्दभरी प्रार्थना की कि :

"ऐती मार पई कुरलाणे तै की दर्द न आया।"

(आसा, महल्ला 1, पृष्ठ 360)

और वह इसका अनुवाद करते हैं :

"हे अकाल पुरुख, जब इतना कत्लोगारत और हाहाकर मची हुई थी, आपको कोई पीड़ा नहीं हुई ?"

आओ देखें कि क्या ये लेखक ठीक कह रहे हैं। क्या गुरु जी ने इतनी दर्द भरी प्रार्थना अकाल पुरुख से की कि नहीं ?

(क) जपुजी की पहली पउड़ी में, गुरु ग्रंथ साहिब के पहले पन्ने पर ही गुरु जी उपदेश देते हैं :

"हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिया नाल।"

अर्थात, "हे नानक, अकाल पुरुख की रज़ा में यही लिखा है और इसी रज़ा में चल।"

फिर आसा महल्ला 5, पृष्ठ 394 पर अंकित है :

"तेरा भाणा मीठा लागे। हरि नाम पदारथ नानक मांगे।"

अर्थात, "हे अकाल पुरुख, जो तेरे भाणे (ईश्वरीय इच्छा) में घटित हो रहा है, वह भाणा मीठा लगता है। नानक को नाम की दात बख़्शो।"

ऊपर बताई गई तुकों का भाव तो यह है कि जीवन में जो कुछ घटित हो रहा है, उसे अकाल पुरुख की इच्छा मानकर स्वीकार कर लेना चाहिए। गुरु नानक जी के घर में आँसुओं और विलाप का कोई स्थान नहीं है। वहाँ अकाल पुरुख की रज़ा के आगे फरियाद करने की भी जगह नहीं। मनुष्य को अकाल पुरुख की रज़ा को जीवन के सबसे मीठे दान की तरह छाती से लगाना ज़रूरी है। जपुजी के माध्यम से गुरु जी ने मनुष्य जाति को यही पहली शिक्षा दी। तब गुरु जी किस प्रकार दर्द महसूस कर सकते हैं ? क्या अकाल पुरुख की ज्योति भी दर्द महसूस कर सकती है ?

(ख) गुरु जी विश्वास दिलाते हैं कि अकाल पुरुख का सच्चा श्रद्धालू जो भी अरदासें करता है, वे हमेशा सुनी जाती हैं और अकाल पुरुख उन्हें स्वीकार करते हैं :–

"नानक दासु मुख ते जो बोलै ईहा ऊहां सचु होवै।"

(धनासरी, महल्ला 5, पृष्ठ 681)

अर्थात, अकाल पुरुख का सच्चा सेवक जो कहता है, हे नानक, वह इस जहान और अगले जहान में भी सच साबित होगा।

गुरु जी दिव्य ज्योति थे। सो, अगर गुरु जी ने अकाल पुरुख के सम्मुख प्रार्थना की होती तो अकाल पुरुख इसे स्वीकार करके बाबर को दंड देते। पर इतिहास बताता है कि गुरु जी ने तो बल्कि बाबर को सात कुलों का राज्य बख़्शा था।

(ग) गुरु जी ऐमनाबाद बाबर के इस शहर पर हमला करने से पहले पहुँच चुके थे और नीचे दिये गये 'शबद' का उन्होंने उच्चारण किया था, जिसमें उन्होंने भाई लालो को बाबर के आने वाले हमले और कत्लेआम के बारे में बताया था। गुरु जी ने कुछ लोगों को शहर छोड़कर चले जाने की राय दी थी और कई चले भी गये थे।

"जैसी मै आवै खसम की बाणी
तैसड़ा करी ज्ञानु वे लालो।
पाप की जंञ लै कबलहु धाया
जोरी मंगै दानु वे लालो।
सरमु धरमु दोइ छपि खलोए
कूडु फिरै परधान वे लालो।
काजीआ बामणा की गल थकी
अगदु पड़ै सैतानु वे लालो।
मुसलमानीआ पड़हि कतेबा
कसट महि करहि खुदाइ वे लालो।
जाति सनाती होरि हिदवाणीआ
ऐहि भी लेखै लाइ वे लालो।
खून के सोहिले गावीअहि नानक
रतु का कुंगू पाइ वे लालो।
साहिब के गुण नानकु गावै
मासपुरी विचि आखु मसोला।
जिनि उपाई रंगि रवाई
बैठा वेखै वखि इकेला।
सचा सो साहिबु सच तपावसु
सचड़ा निआउ करेगु मसोला।
काया कपडु टुकु टुकु होसी
हिंदुस्तान समालसी बोला।"

(तिलंग, महल्ला 1, पृष्ठ 722–723)

ऊपर दिये गये विश्लेष्ण से यह बिलकुल साफ प्रतीत होता है कि गुरु जी ने अकाल पुरुख के सम्मुख दर्द भरी विनती नहीं की थी, बल्कि निडर गुरु नानक ज्योति ने बाबर को संबोधित किया था, जो गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा और क्षमायाचना की।

बाबर अपनी यादों की किताब में लिखता है : "सैदपुर के वासी कत्ल किये गये, उनकी औरतों और बच्चों को कैद करके ले जाया गया और उनकी सारी जायदाद लूट ली गई थी।"

बहुत सारे लोग कत्ल किये गये थे और बाकी बचे हुओं में से अधिकांश को बाबर की फौज ने कैद कर लिया था। कहा जाता है कि गुरु जी और उनके रबाबी मरदाने को भी पकड़कर कैदियों के कैम्प में ले जाया गया था। कैदियों को हाथ की चक्कियाँ दी गई थीं, अनाज पीसने के लिए। गुरु जी ने मरदाने को रबाब बजाने के लिए कहा और कीर्तन आरंभ कर दिया। जैसे ही 'इलाही शबद' गाया गया, सारे कैदी आकर गुरु जी के पास बैठ गये और सब की सब चक्कियाँ अपने आप चलने लगीं। यह करिश्मा देखकर संतरी–चौकीदार अवाक् रह गये। बाबर को खबर दी गई तो उसने आकर सारा नज़ारा अपनी आँखों से देखा। वह हैरान रह गया और गुरु जी से पूछने लगा कि क्या वह उन्हें कुछ भेंट कर सकता है ? गुरु जी ने बेधड़क उत्तर दिया :

"सुनो बाबर मीर, तेरे से कुछ मांगने वाला अहमक फकीर होगा, जबकि तेरी अपनी भूख ही पूरी नहीं हो रही।"

बाबर ने कहा, "हे महापुरुष, मुझे आपके चेहरे में अल्लाह दिखाई देता है। मुझे आप जो हुक्म करोगे, मैं करुँगा।" तब गुरु जी ने नीचे लिखे 'शबद' का उच्चारण किया और कत्लेआम का बहुत सारा दोष बाबर के सिर मढ़ा :

"खुरासान खसमाना कीआ हिंदुस्तान डराया।
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चढ़ाया।
ऐती मार पई करलाणै तै की दरदु न आया।
करता तू सभना का सोई।
जे सकता सकते कउ मारे तो मनि रोसु न होई।1। रहाउ।
सकता सीहु मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई।"

(आसा महल्ला 1, पृष्ठ 360)

यह वो 'शबद' है जिसके बारे में कई लेखकों का विचार है कि गुरु जी ने विनती अकाल पुरुख के लिए की थी। असल में, इस 'शबद' के द्वारा गुरु जी सारा दोष बाबर के सिर पर लगा रहे थे।

गुरु जी ने बाबर से पूछा कि जब तेरी फौज शेर की तरह इन मासूम आदमियों, औरतों और बच्चों पर टूट पड़ी थी, तब तुझे कोई दर्द नहीं हुआ ?

बाबर पष्चाताप में भर उठा। उसके अन्दर एक नई पवित्र और ईश्वरीय चेतना जागी और वह गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा। उसने गुरु जी से मेहर का दान मांगा। (इतिहास बताता है कि राजा, महापुरुषों, फकीरों द्वारा दिए जाने वाले श्राप से हमेशा डरते थे।)

गुरु जी ने उत्तर दिया, "बाबर बादशाह, मेहर की बख़्शीश चाहता है तो अपने सारे कैदियों को रिहा कर दे।" बाबर मान गया इस शर्त पर कि उसके राज्य पर गुरु जी का आशीर्वाद रहेगा और उसका यह राज्य बहुत समय तक कायम रहेगा।" गुरु जी ने वचन दिया, "तुम्हारा राज्य वर्षों तक कायम रहेगा।" इस पर बादशाह ने सारे कैदियों को रिहा कर देने का हुक्म दिया। बाबर ने तब गुरु जी से विनती की कि वह उसे राज्य करने के संबंध में कुछ हिदायतें दें। गुरु जी ने समझाया कि "सच्चा इन्साफ करते रहना, महात्मा पुरुषों, फकीरों का आदरभाव करना, शराब और जूए का त्याग करना। जो राजा इन अवगुणों को नहीं छोड़ता, जीवित रहने पर भी, अपने बुरे कर्मों के कारण रोता–बिलखता रहेगा। हार गये लोगों पर दयावान रहना और अकाल पुरुख की मन लगाकर दिल से पूजा करना।"

अब प्रश्न उठता है कि बाबर को सजा देने की बजाय राजपाट क्यों बख्शा ? गुरबाणी बताती है :

"जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै इहु बिरदु सुआमी संदा।"

(बिहागड़ा, महल्ला 5, पृष्ठ 544)

गुरु जी बताते हैं कि उनके मालिक (अकाल पुरुख) का गुण है कि जो भी उससे क्षमायाचना करता है, उसके चरणों पर गिर पड़ता है, अकाल पुरुख उसे छाती से लगा लेता है। क्योंकि गुरु जी स्वयं ईश्वरीय ज्योति के स्वरूप थे, जब बाबर ने क्षमा का दान मांगा तो उन्होंने बाबर को क्षमा कर दिया और उसे मुगल वंश के चिरस्थायी राज्य का आशीर्वाद दिया। (कहा जाता है कि सात पातशाहियाँ बख़्श दीं।)

गुरु जी करतारपुर में :

तीसरी और आखिरी यात्रा के बाद गुरु जी करतारपुर लौट आए। गुरु जी ने सब तरफ का सफ़र, 'नाम' के सिद्धांत का प्रचार करने और लोगों के मनों में सच का अनुभव जगाने के लिए किया था। अपने कार्य के फल को पक्का रखने के लिए गुरु जी ने दूसरे धर्मों के केन्द्रों के साथ–साथ अपने प्रचार केन्द्र भी स्थापित किये, जिन्हें 'मंजियाँ' कहा गया। जब उन्होंने अपनी लम्बी यात्राएँ पूरी कर लीं, तो अपनी आयु के शेष बीसेक वर्ष करतारपुर में बिताये। वह जानते थे कि जब तक वह अपने नये धर्म की गतिविधियों को केन्द्रित नहीं करेंगे, तब तक इसके जीवित रहने की आशा नहीं की जा सकती। अब तक सारे भारत, श्रीलंका, तिब्बत और मध्य–पश्चिम में सिक्खी के केन्द्र स्थापित हो चुके थे। अन्य किसी धर्म के किसी भी

संस्थापक ने अपने जीवन में प्रदेशों की, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय और सांस्कृतिक सीमाएँ पार करके इतने विशाल संगठन स्थापित नहीं किए थे। जब गुरु जी बाहर के देशों में अपने सफ़र पर गये, तो उन्होंने वहाँ के धर्म के अनुसार वस्त्र पहन लिए थे। उन स्थानों की पवित्रता उनके पवित्र वस्त्रों से अलग नहीं थी। जब वे करतारपुर वापस लौट रहे थे तो उन्होंने अपने यात्री–वस्त्र उतार दिये और गृहस्थ वस्त्र पहन लिए, यह बताने के लिए भी कि वह यह नहीं चाहते कि उनके श्रद्धालू त्यागमय जीवन की ओर प्रेरित हों। सो, वे अपने धर्म स्थान पर बिराजकर लोगों में प्रचार करने लग पड़े।

संगत की स्थापना :

सबसे पहले गुरु जी ने पवित्र सम्प्रदाय बनाया और जहाँ पर सम्प्रदाय के लोग एकत्र होते थे, उस स्थान को गुरद्वारा (अकाल पुरुख का घर) नाम दिया। इस एकत्रता को 'संगत' का नाम दिया गया। सवेरे अमष्त के समय वहाँ जपुजी का पाठ किया जाता था, संध्या के समय सोदर का पाठ और रात्रि में सोने से पहले सोहिला का पाठ होता था। गुरु जी की उपस्थिति में सवेरे और शाम, दोनों समय कीर्तन भी होता था। गुरु जी नियमपूर्वक धर्म–उपदेश दिया करते थे। ये उपदेश अकेले–अकेले श्रद्धालुओं को, और एकत्र हुई संगत को एक साथ भी दिये जाते थे। गुरु जी के शिष्य बनने के लिए श्रद्धालुओं को चरन पाहुल (जिसे चरणामृत भी कहते हैं) दिया जाता था। सिक्खी में प्रवेश करने के लिए यह रस्म गुरु जी के चरण (आम तौर पर पैर की उंगल) धोकर, उसी जल को पिलाने के साथ की जाती थी और साथ ही जपुजी के मूल मंत्र का पाठ भी किया जाता था। इस रस्म का आरंभ गुरु जी ने स्वयं किया था। अकाल पुरुख की महानता, उसकी मेहर के कारण आई बाणी, मनुष्य जीवन के संकट और नाम सुमिरन की प्रमुख आवश्यकता पर जोर दिया जाता था। जो अपनी जाति या धन–दौलत के घमंड में डूबे हुए थे, उनकी कड़ी भर्त्सना की जाती थी और जो कोई भी धार्मिक ढोंग का सहारा लेता था, उसकी पूरी तरह निन्दा की जाती थी। गुरु जी ने नैतिक और आध्यात्मिक, दोनों का मिलाजुला जीवन–मार्ग बताया। जिन्होंने इस विचार को मन में बसा लिया, उन्होंने इस मूल गुण को अपने नित्य के व्यवहार में महकाने का यत्न किया। गुरु जी के उपदेश विशेष तौर पर दो बातों पर जोर देते थे। एक अपने आध्यात्मिक और नैतिक व्यवहार को रीति–रस्मों तक ही सीमित नहीं करना। दूसरा, अपने नैतिक व्यवहार को अपने आप तक या अपने कबीले, नस्ल या अपने धार्मिक सम्प्रदाय की तंग हदों तक ही सीमित नहीं रखना। गुरु जी के उपदेशों का लोगों पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा और उनमें से बहुत सारे गुरु जी के शिष्य बन गये। बाबा बुड्ढ़ा जी, भाई लहिणा जी (जो बाद में गुरु अंगद जी कहलाये), तारू पोपट, पथ्वी, खेड़ा, अजिता रंधावा, शेख मल्लो और उबरे खान कुछेक उदाहरण हैं, जो गुरु जी के दर्शन करते ही शिष्य बन गये।

ईमानदार जीवन :

श्रद्धालुओं को ईमानदार, कड़ी मेहनत वाला जीवन जीने पर जोर दिया जाता था। सन्यास की तो स्पष्ट तौर पर मनाही थी। इसके स्थान पर नियमबद्ध सांसारिक और पारिवारिक जीवन ही उचित रास्ता बताया गया था। नेक कर्म, कड़ी मेहनत और उस मेहनत की कमाई में से कुछ हिस्से को अकाल पुरुख के नाम से दूसरों को बांटना, परिवार का पालन–पोषण करना एक नैतिक ढंग का उत्साही जीवन था। गुरु जी ने स्वयं अट्ठारह से बीस वर्ष की अपनी शेष आयु में खेतों में खुद अपने हाथों से काम करके, करतारपुर में ऐसे जीवन की मिसाल कायम की।

गुरु जी ने जीवन के ऐसे राह के लिए इस शबद में भी जोर दिया :

"ज्ञान विहूणा गावै गीत।
भूखे मुलां घरे मसीत।[24]
मखटू होइ कै कन्न पड़ाए।[25]
फकरु करे होल जाति गवाए।

गुरु पीरु सदाए मंगणे जाइ।
ता कै मूलि न लगीयै पाइ।
घालि खाइ किछु हथहु देहि।
नानक राहु पछाणहि सेइ।"
(सारंग की वार, श्लोक महल्ला 1, पृष्ठ 1245)

गुरु का लंगर :

हर कोई अपने जीवन के लिए कमाई करता और अपनी कमाई का कुछ हिस्सा गुरु के लंगर के लिए देता था। सारे लोग, ब्राह्मण या शूद्र, राजा या साधारण मनुष्य, मुसलमान या हिंदू एक पंगत में मिलकर एक ही भोजन, गुरु जी के लंगर में बना हुआ, खाते थे।

बाणी की रचना और इसे एकत्र करना :

ये वो वर्ष थे, जब गुरु जी के बहुत सारे श्रद्धालू गुरु जी से उपदेश लेते थे और उन्हें कलमबद्ध किए जाते थे। कई श्रद्धालुओं ने, बताया जाता है, रोज के 'पाठ' और 'शबद बाणी' नकल कर लिए थे। ये संग्रह "बाणी की पोथियाँ" नाम से पुकारे जाते थे। गुरु जी के जीवन में अंकित बाणी की पोथियाँ, दूसरे गुरु, गुरु अंगद देव जी को सौंपी गई थीं।

करतारपुर से कुछ और सफ़र :

हालाँकि गुरु जी अपनी यात्राओं के बाद करतारपुर में आकर बस गये थे, पर अभी भी करतारपुर के आसपास से दो सौ मील तक छोटी–छोटी यात्राएँ कर लेते थे। गुरु जी बहुत सारी जगहों पर गये और नाम का उपदेश दिया। इनमें से बहुत से स्थानों पर लोग गुरु जी के शिष्य बन गये और गुरु जी के सत्कार में गुरद्वारे बनाये गये।

गुरु जी का अचल बटाला में आना :

करतारपुर से कोई 25 मील पर अचल बटाला नाम का स्थान है, जहाँ शिवरात्रि के मेले पर सैकड़ों जोगी मेले में भाग लेने के लिए आते थे। गुरु जी भी वहाँ अपने मत का प्रचार करने के लिए गये। दूर–निकट से हजारों लोग गुरु जी का दर्शन करने और उनके उपदेश सुनने के लिए आये। वहाँ मेले में तीन अलग–अलग तम्बू (दीवान) लगे हुए थे– एक जोगियों का, एक गुरु जी का और तीसरा, गाने वालों की एक टोली का। जोगियों वाले तम्बू की तुलना में गुरु जी के तम्बू में अधिक से अधिक लोग आते गये। इस पर जोगी बड़े गुस्से में आ गये और ईर्ष्या में भर गये। उन्होंने गुरु जी को नीचा दिखाने का इरादा कर लिया।

गाने वालों को जो भी रुपये–पैसे मिल रहे थे, उन्हें वे एक कटोरे में इकट्ठा किये जा रहे थे। जोगियों ने किसी तरह वह रुपयों–पैसों से भरा कटोरा वहाँ से चुराकर छिपा दिया, यह सोचकर कि गवैये गुरु जी के पास सहायता मांगने जाएँगे–कटोरा ढूँढ़ देने के लिए और अगर गुरु जी उस कटोरे का पता न लगा पाये तो गुरु जी का महत्व कम हो जाएगा।

गुरु जी की महानता जानते हुए गवैये गुरु जी के पास सहायता के लिए विनती करने आये। निराले गुरु जी ने उन्हें जोगियों की शरारत के बारे में बताया और कटोरा तलाश दिया। इस तरह जोगियों की बहुत बुरी हार हुई।

जोगियों ने गुरु जी पर दूसरा हमला बहस के रूप में करने का विचार बनाया। जैसा कि पहले बता चुके हैं, गुरु जी ने अपनी यात्राओं के बाद यात्रा वाले वस्त्र उतार दिये थे और साधारण गृहस्थ जीवन वाले वस्त्र पहन रखे थे। जोगियों ने कहा, " हे गुरु, आप एक महात्मा होकर गृहस्थियों वाले वस्त्र पहने हुए हैं। एक महात्मा पुरुष गष्हस्थ जीवन क्यों व्यतीत करे ?" भंगरनाथ[26] ने भी एक सवाल किया, "जब दूध खट्टा हो जाए तो मथने पर उसमें से मक्खन नहीं निकलता। आपने सन्यासियों वाले वस्त्र उतारकर साधारण वस्त्र क्यों पहने हुए हैं ?"

गुरु जी ने उत्तर दिया, "भंगरनाथ जी, आपकी माता गंवार थी। उसे पता नहीं था कि बिलौने वाली चाटी को कैसे धोकर साफ–सुथरा रखना चाहिए और इस कारण तुझे जन्म देते हुए मक्खन खराब कर दिया। आप गृहस्थ जीवन त्यागकर सन्यासी बन गये हो और फिर गृहस्थ लोगों के घरों से मांगने जाते हो।"

इस पर जोगी क्रोध में आ गये और अपनी करामाती शक्तियों से उन्होंने गुरु जी को परेशान करना शुरू कर दिया। एक जोगी काला नाग बनकर गुरु जी को डराने लगा, दूसरा भेड़िया बन गया और एक अन्य ने आग की बरसात आरंभ कर दी। शक्तिशाली गुरु जी अडिग बैठे रहे, बिना घबराये और बगैर किसी हानि के। जब जोगी बुरी तरह हार गये तो भंगरनाथ ने गुरु जी से पूछा कि आप ने संसार भर को करामातें दिखाई हैं, हमें क्यों नहीं दिखलाते ?

गुरु जी ने उत्तर दिया कि उनके पास सच्चे नाम के सिवाय और कोई करामात नहीं है और उन्होंने इस शबद का उच्चारण किया :–

"पहिरा अगनि हिवै घरु बाधा भोजनु सारु कराई।
सगले दूख पाणी करि पीवा धरती हाक चलाई।
धरि ताराजी अम्बरु तोली पिदे टंकु[27] चड़ाई।
ऐवडु वधा मावा नाही सभसै नथि चलाई।
ऐता ताणु होवै मन अंदरि करी भि आखि कराई।
जेवडु साहिबु तेवड दाती दे दे करे रजाई।
नानक नदरि करे जिसु उपरि सचि नामि वडिआई।।"

(माझ दी वार, श्लोक महल्ला 1, पृष्ठ 147)

अर्थात, अगर मैं आग की पोशाक पहन लूँ, बर्फ के अन्दर घर बना लूँ और लोहे को अपना खाना बना लूँ। सारी तकलीफों को अगर मैं जल की तरह पी जाऊँ और जमीन को धकेल कर अपने सामने लगा लूँ, आसमान को तराजू के पलड़े में धर कर, अगर मैं इसको पिछले पलड़े में रखे हुए चार मासे के बाट से तोल लूँ, अगर मैं इतना बड़ा हो जाऊँ कि कहीं भी न समा सकूँ, और अगर मैं सभी को नकेल डालकर नाक से पकड़कर चलाता रहूँ, अगर मेरे अन्दर इतना बल हो कि ऐसी बातें मैं करुँ और अपना कहा दूसरों से भी कराऊँ, लेकिन यह सब कुछ व्यर्थ है। जितना बड़ा स्वामी है, उतने ही बड़े उसके दान हैं। वह अपनी रज़ा के अनुसार देता है। नानक जिस पर सांई अपनी मेहर की नज़र करता है, उसे सच्चे नाम की महिमा प्राप्त होती है।

जोगियों ने अन्त में गुरु जी को प्रणाम किया और प्रशंसा करते हुए कहा, **"धन्य हो, हे नानक, आपके कार्य महान हैं। आप एक महान पुरुष होकर उबरे हो और आपने संसार में इस कलियुग के असत्यभरे समय में ज्ञान का प्रकाश किया है।"**

बाबा बुड्ढ़ा जी :

गुरु जी करतारपुर में सूर्योदय के समय ही कीर्तन आरंभ कर देते थे। एक सात साल का बालक कीर्तन सुनने आ जाता था और गुरु जी के पीछे अदब के साथ खड़ा रहता था। एक दिन गुरु जी ने पूछा, "क्यों भाई, तू इतनी सुबह कीर्तन सुनने क्यों आता है जबकि तेरी उम्र तो खाने, खेलने और सोने की है ?" उसने उत्तर दिया, "साहिब जी, एक दिन मेरी माँ ने मुझे आग जलाने के लिए कहा। जब मैंने लकड़ियों को

आग लगाई, मैंने देखा कि छोटी लकड़ियाँ बड़ी लकड़ियों से पहले जलीं। उस दिन से मुझे डर सता रहा है कि मैं जल्दी ही मर जाऊँगा। मुझे सन्देह है कि मैं बड़ी उम्र तक जिऊँगा भी कि नहीं, इसलिए मैं आपके पवित्र कीर्तन को सुनने आता हूँ।" गुरु जी इस छोटे बच्चे के मुख से ऐसे समझदारी भरे वचन सुनकर कहने लगे, "तू हालांकि एक छोटी उम्र का बालक है, पर तू बातें एक बूढ़े व्यक्ति की तरह करता है।"

उस दिन से उस लड़के को 'भाई बुड्ढ़ा' कहकर बुलाने लग पड़े। उसे इतना ऊँचा सम्मान मिला कि उसको गुरु जी के बाद, पाँच गुरु साहिबान को गुरगद्दी मिलने के समय उनके मस्तक पर केसर का तिलक लगाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

भाई बुड्ढ़ा का पहला नाम रामदास था और एक गाँव का नाम भी इसके बाद यही रखा गया। भाई का अर्थ है–भ्राता। गुरु जी ने समस्त मनुष्य जाति को एक अकाल पुरुख की सन्तान बताया था, सो उन्होंने इच्छा प्रगट की कि उनके सारे शिष्य एक–दूसरे के भाई समझे जाएँ और इस तरह भाई कहकर बुलाये जाएँ। अब 'भाई' का पद सिख ग्रंथियों, प्रचारकों आदि को दिया जाता है।

दुनी चंद :

गुरु जी एक बार लाहौर में से होकर गुजरे। वहाँ एक लखपति दुनी चंद अपने पिता का श्राद्ध[28] करवा रहा था। जब उसने गुरु जी के आने के बारे में सुना, तो उसने उन्हें भी श्राद्ध में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। गुरु जी उसके घर पहुँचे और पूछा कि यह कैसा समारोह है। दुनी चंद ने बताया कि उसके पिता का श्राद्ध है और उसने पिता के नाम पर एक सौ ब्राह्मणों को भोजन खिलाया है। गुरु जी ने कहा, "तेरा पिता दो दिन से भूखा है, उसने कुछ नहीं खाया और तू उसके नाम पर एक सौ ब्राह्मणों को भोजन खिलाने का दावा कर रहा है।" दुनी चंद ने पूछा, "मेरा पिता कहाँ है ?" गुरु जी ने उत्तर दिया, "तेरा पिता जब जिन्दा था, उसका मन मांस खाने के लिए ललचाया, जिसे एक सिख पका रहा था, और यही इच्छा मन में लेकर मर गया था। सो, मरने के बाद उसकी आत्मा एक भेड़िये के शरीर में समा गई थी। वह भेड़िया
यहाँ से कोई छह मील दूर एक वृक्ष के झुंड के नीचे बैठा है और दो दिन से उसे खाने के लिए कुछ नहीं मिला।" दुनी चंद ने अनुभव कर लिया कि अपने पितरों को ब्राह्मण पुजारियों के जरिये जो भेजा जाता है, वह उन्हें नहीं मिलता है। सो, श्राद्ध जैसी रस्में केवल अंध–विश्वास के कारण हैं।

दुनी चंद ने बहुत सारा धन एकत्र किया हुआ था और हमेशा इसमें और अधिक वृद्धि करने में लगा रहता था। गुरु जी ने उसे एक सुई दी और कहा कि इसे अपने पास रख, इसे अगले जहान में जाकर तेरे से वापस ले लेंगे।

दुनी चंद ने पूछा, "महाराज, मरने के बाद सुई किस तरह ले जा सकता हूँ ?" गुरु जी ने उत्तर दिया, "अगर यह छोटी–सी चीज अगले जहान में नहीं जा सकेगी, तो तेरी इतनी धन–दौलत कैसे जाएगी ?"

यह सुनकर दुनी चंद गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा और विनती की कि गुरु जी उसे ज्ञान का दान दें। गुरु जी ने कहा, "अपना कुछ धन अकाल पुरुख के नाम पर बांट दे और गरीबों को भोजन खिला।" गुरु जी ने इस समय इस 'शबद' का उच्चारण किया :

"कूड़ु राजा कूड़ु परजा कूड़ु सभु संसारु।
कूड़ु मंडप कूड़ु माड़ी कूड़ु बैसणहारु।
कूड़ु सुइना कूड़ु रुपा कूड़ु पैह्नणहारु।
कूड़ु काया कूड़ु कपड़ु कूड़ु रूपु अपारु।
कूड़ु मीआ कूड़ु बीबी खपि होए खारु।
कूड़ि कूड़ै नेहु लगा विसरिया करतारु।
किसु नालि कीचै दोस्ती सभु जगु चलणहारु।

कूड़ु मिठा कूड़ु माखिउ कूड़ु उोबे पूरु।
नानक वखाणै बेनती तुधु बाझु कूड़ो कूड़ु।1।"

(आसा दी वार, श्लोक महल्ला 1, पृष्ठ 468)

भाई लहणा जी :

जोधा गुरु जी का एक शिष्य था, जो खडूर नाम के एक छोटे नगर जो करतारपुर से लगभग 50 मील दूर है, में रहता था। भाई लहणा एक अमीर व्यापारी का सुपुत्र था और वह भी खडूर का वासी था। भाई लहणा हिंदू देवी दुर्गा का पुजारी था। वह हर साल कांगड़ा पहाड़ियों में दुर्गा के मंदिर की यात्रा करने जाया करता था।

एक सुबह जब भाई जोधा जपु जी का पाठ कर रहा था, भाई लहणा ने सुना और इस दिव्य बाणी के आनन्द ने उसके दिल को छू लिया। उसने भाई जोधा से पूछा कि यह किसकी बाणी है। भाई जोधा ने गुरु नानक जी के बारे में विस्तार से बताया। इस पर भाई लहणा का मन गुरु जी के दर्शन के लिए लालायित हो उठा।

दुर्गा देवी के मंदिर की अगली वार्षिक यात्रा के लिए अपने साथियों के संग चला तो भाई लहणा राह में गुरु जी के दर्शन करने के लिए रुक गया। गुरु जी के दर्शन करते ही वह सच्चे गुरु के प्रेम और उसकी कृपा से पसीज उठा। गुरु जी के पूछने पर जब उसने अपना नाम बताया, तो गुरु जी ने कहा, भाई, अगर तू मुक्ति लहण (लेना) चाहता है, तो वह इसी संसार में मिलेगी और कहीं नहीं। गुरु जी से कुछ उपदेश मिलने पर भाई लहणा अकाल पुरुख के सुमिरन में लग गया।

कहा जाता है कि भाई लहणा ने सपने में एक स्त्री को लाल वस्त्र पहने गुरु जी के घर की सेवा करते हुए देखा। लहणा जी ने पूछा कि तू कौन है। उसने उत्तर दिया कि वह दुर्गा (देवी) है और वह हफ्ते में एक बार गुरु जी की सेवा करने के लिए आती है। इस पर भाई लहणा को गुरु नानक जी की दिव्य महिमा का पक्का विश्वास हो गया।

जैसे–जैसे समय गुजरता गया, भाई लहणा 'नाम' के सुमिरन में डूबता गया और गुरु जी के अधिक से अधिक करीब और उनका आज्ञाकारी श्रद्धालू होता चला गया।

ज्यों–ज्यों गुरु जी का इस दुनिया से जाने का समय करीब आता गया, माता जी (गुरु जी की पत्नी) को दिख रहा था कि गुरु जी की गद्दी आगे चलेगी। जैसा कि रिवाज है, माता जी सदैव सोचते कि मेरे बेटे ही गुरु जी की जायदाद और गुरगद्दी के अधिकारी होने चाहिएँ। एक दिन माता जी ने गुरु जी से कहा, "स्वामी जी, मेरे बेटों को ध्यान में रखना।" इसका भाव था कि गुरगद्दी इन्हीं पुत्रों में से ही एक को दी जानी चाहिए। गुरु जी ने कहा, "जाओ, बेटों को लेकर आओ।" जब वे गुरु जी के सामने आये तो गुरु जी ने एक कटोरा पास वाले गन्दे पानी के पोखर में फेंककर, अपने बड़े सुपुत्र श्री चंद से कहा कि जाकर पोखर में से कटोरा निकाल लाओ। श्री चंद ने उत्तर दिया, "आपने यह कटोरा फेंका ही क्यों अगर निकालकर लाना था ?" सो, उसने कटोरा निकालकर लाने से इन्कार कर दिया। इसी प्रकार, छोटे सुपुत्र लख्मी दास ने भी निकालकर लाने से मना कर दिया। तब गुरु जी ने लहणा जी की ओर देखा और कहा, "लहणा जी, तुम जाओ और कटोरा निकाल लाओ।" लहणा जी ने कहा, "सत्य वचन।" और जाकर कटोरा निकाल लाये, अपने कपड़ों का कीचड़ से खराब हो जाने का ध्यान किये बगैर।

एक दिन गुरु जी ने लहणा जी से कहा कि अपने घर जाओ और अपने कामकाज संभाल आओ। कुछ समय बाद जब वह वापस आये, गुरु जी के घर से पता चला कि गुरु जी खेतों में काम कर रहे हैं और शाम को घर लौटेंगे। भाई लहणा सीधे खेतों की ओर गुरु जी के दर्शन करने के लिए चल पड़े। गुरु जी ने घास के तीन गठ्ठर अपनी गायों के लिए बांधकर रखे हुए थे, घर ले जाने के लिए। घास गीला और कीचड़ से सना होने के कारण गुरु जी के सिख उन्हें उठाने से झिझक रहे थे। तब गुरु जी ने अपने पुत्रों से उन गठ्ठरों को उठाकर ले चलने के लिए कहा। पर वे भी अपने इस फर्ज से टालमटोल कर गये। भाई लहणा, जो तभी पहुँचे थे, ने गुरु जी को नमस्कार किया और कहा, "महाराज, यह सेवा मुझे करने दो।" लहणा जी ने तीनों गठ्ठर उठा लिए और गुरु जी के पीछे–पीछे चल पड़े। जब वे घर पहुँचे तो माता

जी ने गुरु जी से शिकायत की, "आपने मेहमान को मजदूरों वाला काम देकर अच्छा नहीं किया। उसके कपड़े गठ्ठरों में से टपक रहे कीचड़ के कारण सिर से पांव तक खराब हो गये हैं।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "यह कीचड़ नहीं, यह अकाल पुरुख के दरबार का केसर है जो कुछ खास जीवों को लगता है।" माता जी ने फिर भाई लहणा के वस्त्रों की ओर देखा तो वहाँ केसर ही छिड़का हुआ था। सिखो द्वारा इन तीन गठ्ठरों को आध्यात्मिक, सांसारिक और गुरगद्दी का प्रतीक समझा जाता है।

गुरु जी ने अब अपने सिखों की बाकायदा परीक्षा लेनी आरंभ कर दी। जाड़े की एक रात के समय भारी बरसात हो रही थी, जिससे गुरु जी के घर की दीवार का कुछ हिस्सा ढह गया। गुरु जी चाहते थे कि दीवार की मरम्मत अभी ही की जाए। गुरु जी के पुत्रों ने यह कहकर कि इस वक्त इतनी ठंड है और रात भी है, सवेरे किसी राजमिस्त्री को बुलाकर मरम्मत करवा देंगे। गुरु जी ने कहा कि राज मिस्त्री की ज़रूरत नहीं है। गुरु का काम उसके सिखों को करना चाहिए। भाई लहणा यह सुनकर उठ खड़े हुए और दीवार की मरम्मत करना आरंभ कर दिया। जब सारा काम समाप्त होने वाला था, तब गुरु जी ने कहा, "दीवार टेढ़ी बन गई है, इसे गिरा दो और फिर से बनाओ।" भाई लहणा ने उसी प्रकार किया, पर गुरु जी ने फिर यही जताया कि उनकी तसल्ली नहीं हुई। लहणा जी ने मालिक का हुक्म मान लिया। पर गुरु जी की अभी भी तसल्ली नहीं हुई थी। यह देखकर गुरु जी के पुत्रों ने भाई लहणा से कहा कि आप मूर्ख होकर बेतुके हुक्म माने जा रहे हो। भाई लहणा ने नम्रता से उत्तर दिया कि एक सेवक को मालिक का काम करके अपने हाथ सफल करने चाहिएँ। इस प्रकार, गुरु जी और उनका सिख एक दूसरे के और अधिक निकट हो गये और एक दूसरे से अधिक प्रसन्न। गुरु जी के पुत्र इस दष्ढ़ सिख (भाई लहणा) से ईर्ष्या करने लगे। उन्होंने भाई लहणा को लेकर उपजी अपनी घृणा को छिपाने की ज़रा भी कोशिश नहीं की।

एक दिन एक जोगी आया और गुरु जी को बहुत बड़ी संख्या में अपने सिख बना लेने के लिए बधाई दी। गुरु जी ने उत्तर दिया कि उनके असली सिख थोड़े से ही हैं, जैसा कि जोगी स्वयं ही देख लेगा। गुरु जी और जोगी जंगल की ओर चल पड़े, अपने संग आ रहे सिखों की परीक्षा लेने के लिए। जैसे ही, आगे बढ़े तो देखा कि सड़क तांबे के सिक्कों से भरी पड़ी है। कुछ सिखों ने वे सिक्के इकट्ठे कर लिए और लौट गये। कुछ और आगे गये तो सड़क चांदी के सिक्कों से ढकी पड़ी थी। कई सिखों ने उन्हें उठाया और घर लौट गये। जैसे ही, बाकी की टोली और आगे बढ़ी तो उन्होंने सड़क पर सोने के सिक्के पड़े देखे। शेष बचे सिखों में से बहुतों ने ये सिक्के संभाल लिए और साथ छोड़ गये। केवल जोगी, दो सिख, गुरु जी और भाई लहणा रह गये। और आगे बढ़े तो एक चिता देखी। मृतक के शरीर के पास चार दीये जल रहे थे। लाश एक चादर से ढकी हुई थी जिसमें से बुरी–सी गंध आ रही थी। गुरु जी ने पूछा, "है कोई जो इस मृतक शरीर को खायेगा ?" सिख तो इस भयानक प्रस्ताव को सुनकर पीछे लौट गये, पर भाई लहणा गुरु जी के लिए अपनी श्रद्धा में परिपक्व रहा। भाई लहणा ने हाथ जोड़कर गुरु जी से पूछा, "महाराज, लाश को किस तरफ से खाना शुरू करुँ, पांव की तरफ से या सिर की तरफ से ?" गुरु जी ने कहा कि बीच कमर से शुरू करो। भाई लहणा ने लाश पर से चादर उठाई। देखो, करतार की करामात! लाश की जगह वहाँ प्रसाद का एक थाल पड़ा था। भाई लहणा ने प्रसाद पहले गुरु जी को दिया और कहा कि जो बचेगा, वह खुद खाएगा। गुरु जी ने कहा, "भाई, तुमने मेरा रहस्य जान लिया है। तुम मेरा रूप हो गये हो। मैं तुम्हें वह मंत्र दूँगा, जो धर्म का सार है। इस मंत्र से तुम इस जगत में प्रसन्नचित्त रहोगे और इसके बाद अगले जन्म में भी।" गुरु जी का भाव इस मूलमंत्र से था जो जपुजी की भूमिका है :

"ੴ सतिनामु करता पुरख, निरभउ, निरवैरु, अकाल मूरति, अजूनी, सैभं, गुरप्रसादि। जपु आदि सचु, जुगादि सचु, है भी सचु। नानक होसी भी सचु।।"

इस पर जोगी ने कहा, "हे नानक जी, जो आपके अंग से उपजा है, वही गुरु बनेगा।" गुरु जी ने लहणा जी को छाती से लगाया और कहा कि तुम ही मेरे उत्तराधिकारी बनोगे।

यहाँ गुरु जी ने जो उपदेश दिया, वह था कि एक सिख के लिए निःसंदेह अपने आप को पूरा का पूरा गुरु जी को अर्पित कर देना ज़रूरी है। उसे गुरु के आदेश के सम्मुख पूरा सिर झुकाना आवश्यक है। तब और तभी सिख अपने लक्ष्य, अर्थात अकाल पुरुख से अभेद होने तक पहुँचता है। गुरु जी के पुत्रों ने

हर कदम पर उनसे सवाल किये, जबकि भाई लहणा ने अब भी कुछ कहे बगैर अपने आप को गुरु जी को अर्पण कर दिया। नतीजे के रूप में भाई लहणा जी को गुरगद्दी का दान मिला और वह दिव्य ज्योति का रूप बन गये। गुरु जी के आदेश और आचरण–संहिता के अनुसार एक सिख को गुरु की मेहर का दान लेने के लिए अपना नित्य का कार्य–व्यवहार करते हुए अपना जीवन आध्यात्मिक और नैतिक ढंग से जीना ज़रूरी है। गुरु जी का आदेश स्पष्ट है :

"हुकमि मन्नियै होवै परवाणु ता खसमै का महिलु पाइसी।"

(आसा दी वार, पउड़ी 15, पृष्ठ 471)

गुरु जी का ज्योति जोत समाना अर्थात् परम ज्योति में विलीन होना :

गुरु जी यह जानते हुए कि उनका शरीर त्यागने का समय नज़दीक आ रहा है, अपना उत्तराधिकारी निश्चित करना आवश्यक समझते थे। उनके पुत्रों ने गुरु जी का हुक्म नहीं माना था, इसलिए वे गुरगद्दी के योग्य साबित नहीं हुए थे।

2 सितम्बर 1539 (2 आश्विन 1596 बिक्रमी, आश्विन कृष्ण पक्ष 5) को गुरु नानक साहिब ने भाई लहणा जी के सम्मुख पाँच पैसे रखे और उन्हें गुरगद्दी के उत्तराधिकारी के रूप में अपना शीश निवाया। उन्होंने भाई लहणा जी के शीश पर आध्यात्मिक बादशाही का छत्र रख दिया। इस तरह उन्होंने उन्हें दूसरा नानक बनाकर उनका नाम गुरु अंगद देव रख दिया।

"जोति उहा जुगति साइ सहि काया फेरि पलटीयै।"

(रामकली की वार, राय बलवंड, पृष्ठ 966)

जब गद्दी गुरु अंगद जी को दी गई, लोगों ने अनुभव किया कि गुरु नानक जी जल्द ही संसार से शरीर त्याग देंगे। (ईश्वरीय प्रकाश और ज्योति के रूप में तो गुरु जी सदैव मौजूद हैं।) चारों ओर से सिख, हिंदू और मुसलमान लोग गुरु नानक साहिब के दर्शन के लिए आए।

गुरु अंगद देव जी को गुरगद्दी सौंपने के बाद गुरु नानक जी के पुत्रों ने पिता से पूछा कि वह उनके लिए क्या प्रबंध करके जा रहे हैं। गुरु जी ने उत्तर दिया, "मेरे बच्चो, अकाल पुरुख अपने रचे सारे जीवों का पालन–पोषण करने वाला है, सो, तुम्हें भोजन–कपड़ा बहुत मिलेगा और अगर तुम अकाल पुरुख के नाम का सुमिरन करते रहोगे, तो वह तुम्हारी रक्षा करेगा।"

देह त्यागने के बाद गुरु जी के मुसलमान श्रद्धालू उनकी मष्तक देह को दफनाना चाहते थे। हिंदू श्रद्धालू संस्कार करने की इच्छा रखते थे। जब गुरु जी से पूछा गया कि क्या करें तो गुरु जी ने उत्तर दिया, "हिंदू मेरे दायीं ओर फूल रख दें और मुसलमान मेरे बायीं ओर। अगली सुबह जिस तरफ के फूल ताजा रहेंगे, वही अपनी इच्छानुसार मेरी देह का निपटारा कर लें।"

गुरु जी ने परम ज्योति में विलीन होने के समय अपने ऊपर एक चादर ओढ़ ली थी। सवेरे जब चादर उठाई गई, तो गुरु जी की देह वहाँ नहीं थी, पर फूल दोनों तरफ ताजे ही रहे थे। ज्योति अकाल पुरुख की महान ज्योति में समा गई और गुरु जी की आत्मा परिपूर्ण महान आत्मा में जा मिली। इससे इस तथ्य की पुष्टि होती है कि गुरु जी एक शरीर नहीं थे, बल्कि दिव्य ज्योति थे।

हिंदुओं और मुसलमानों ने अपने–अपने फूल उठा लिए और चादर आधी–आधी करके बांट ली। हिंदुओं ने अपने हिस्से की चादर का संस्कार कर दिया और मुसलमानों ने अपने हिस्से की चादर को दफना दिया। यह घटना करतारपुर 22 सितम्बर 1539 (23 आश्विन कृष्ण पक्ष 10, सम्वत् 1596) को घटी। गुरु जी की आयु लगभग साढ़े सत्तर वर्ष की थी।

गुरु जी के सत्कार में रावी नदी के किनारे सिखों ने वहाँ एक गुरद्वारा बनाया और मुसलमानों ने एक समाधि। उसके बाद, इन दोनों को नदी बहाकर ले गई है, शायद एक अलौकिक शक्ति के द्वारा ऐसा हुआ ताकि गुरु जी के अन्तिम समय के स्थान की मूर्ति पूजा न हो।

प्राचीन समय में रीति–रस्में और वहम–भरम माने जाते थे। धर्म सिकुड़कर केवल रीति–रस्मों तक ही सीमित रह गया था। गुरु नानक देव जी का जीवन और उनका उपदेश, रीति–रस्मों के अलाभकारी होने

का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। गुरु जी ने इनके खोखलेपन को प्रगट किया और मनुष्यों को ऐसे रिवाजों से ऊपर उठने के लिए उत्साहित किया। उभारा। गुरु जी के हाथ में न तलवार थी, न डंडा। केवल 'इलाही शबद' के द्वारा उन्होंने प्रचार किया कि केवल निरंकार परिपूर्ण अकाल पुरुख की पूजा करनी चाहिए। कोई भी धर्म जो अपने मूल्यों की रक्षा नहीं करता, वह प्रगति के निचले स्तर पर खड़ा हुआ है और समय आने पर लुप्त हो जाने वाला समझा जाता है। गुरु जी के धर्म में से बुद्धिहीन धर्म–सिद्धान्तों और व्यर्थ की रीतियों को बाहर रखा गया है।

1. पुरातन जनम–साखी और भाई गुरदास जी गुरु नानक जी का जन्म 20 अक्तूबर(कार्तिक) बताते हैं जब कि अन्य इसे 15 अप्रैल(बैसाख) मानते हैं।
2. यह गुरु जी की आदि बाणी कही जाती है और गुरु ग्रंथ साहिब में आशा महल्ला प्रथम–पट्टी लिखी, पृष्ठ 432 पर अंकित है।
3. लालो गुरु जी का सिख था।
4. मरदाना एक मुसलमान रबाबी और गुरु जी का श्रद्धालू और हमेशा का साथी था।
5. जब बाणी अकाल पुरुख के अन्दर से गुरु जी के हृदय में आई, उसको 'उच्चारण' कहा है, वरना 'पढ़ी' का अक्षर प्रयोग किया गया है।
6. कुछ लेखक कहते हैं कि स्नान करने के बाद गुरु जी साथ वाले जंगल में चले गये।
7. जनम–साखियों में गुरु जी यात्राओं को उदासियाँ लिखा गया है। आम तौर पर 'उदासी' का भाव जग का त्याग है। पर गुरु नानक जी ने जगत का त्याग कभी नही किया।
8 कई लेखक कहते हैं कि गुरु जी अपनी पहली उदासी पूरब में 'पुरी' की करके, वापस लौट आये थे और फिर दूसरी उदासी में दक्षिण की ओर गये।
9. सज्जन से तात्पर्य है– मित्र ।
10. इसे चरणामष्त भी कहते हैं। यह सिख बनने की एक रीत थी। गुरु जी के चरण पानी में धो कर, उस पानी को पीना और साथ ही 'जपुजी साहिब' में से मूल मंत्र का पाठ किया जाता था। यह रस्म गुरु जी द्वारा ही होती थी।
11. ੴ(ओऽम) शब्द शाश्वत अकाल पुरुख का प्रतीक है। अकाल पुरुख नाम के स्थान पर इस अक्षर का प्रयोग किया गया था।
12. इसका अर्थ है कि वे भाग्यवाली हैं। आम का वृक्ष सदा ही हरियाला और छांव देने वाला होता है।
13. मलियानलो हवा संदल के वष्क्ष की ओर से आती।
14. संसार की सारी आँखें तेरी हैं, पर तू निरंकार है, सो तेरी कोई आँख नहीं।
15. सारंग पक्षी को चातष्क या पपीहा भी कहते हैं। यह पानी तब पीता है जब चन्द्रमा स्वाति के गर्भ में होता है। अर्थात् जब इसके पानी पीने का समय आता है, तब यह वास्तव में प्यासा होता है।
16. कई लेखकों का विचार है कि गुरु जी कुरुक्षेत्र पहली उदासी(यात्रा) के आरंभ में गये थे।
17. भाई मनी सिंह वाली जनम–साखी के अनुसार,।
18. पषुओं का मांस।
19. पानी से पैदावार होती है और पषु पैदावार पर पलते हैं।
20. कई लेखकों का मत है कि दूसरी यात्रा की राह दूसरी थी। वे कहते हैं कि गुरु जी तलवंडी से लाहौर गये। फिर, सुल्तानपुर और जालंधर, होशियारपुर होते हुए पीर बुधू शाह की जगह पर पहुँचे, जहाँ छठे पातशाह ने फिर कीरतपुर शहर बसाया। वहाँ से वह बिलासपुर गये, मंडी, रवालसर, ज्वाला जी और कांगड़ा पहुँचे। फिर, वह बैजनाथ, कुल्लू और सप्ती वैली गये और मनाली गाँव में ठहरे। इस गाँव में गुरु साहिब की दी हुई चीजें हैं, जिन्हें गाँव वाले पूजते हैं। वहाँ से परांग रास्तों में से निकलते हुए तिब्बत पहुँचे। फिर मानसरोवर झील, कैलाश पर्वत(सुमेर पर्वत) गये। चसूल राह से वह लद्दाख गये, फिर सकारदू और कारगिल होते हुए अमरनाथ पहुँचे। पहलगाम और अनंतनगर होते हुए श्रीनगर पहुँचे, फिर बारामूला, हसन अब्दाल, टीला बल मुदाई और सियालकोट होते हुए वापस तलवंडी पहुँचे।
21. सिद्धों के साथ चर्चा गुरु ग्रंथ साहिब में राग रामकली महल्ला 1,'सिद्ध गोष्ठी' पृष्ठ 938 पर है। कई कहते हैं कि यह चर्चा सिद्धों से अचल्ल बटाले में हुई है, पर यह समझने वाली बात है कि यहाँ पर गुरु साहिब नौजवान थे और अचल्ल बटाले शिवरात्रि के मेले पर वह अपनी उम्र के आखिरी साल में थे। सिद्ध गोष्ठी में हजूर को 'बाले'(नौजवान) कहकर पुकारा गया है। कई कहते हैं कि यह चर्चा दोनों जगह हुई है सिद्धों के साथ।
22. भाई गुरदास, वार प्रथम, पउड़ी 32।
23. भाई गुरदास, वार 1, पउड़ी 35–36
24. मुल्ला मस्जिद में अपना सारा वक्त गुजारता है ताकि उसे अधिक दान मिले।
25. जोगी लोग।
26. भंगरनाथ जोगियों का मुखिया था।
27. टंक भारत में एक तौल है जो चावलों के 256 दानों के वजन के बराबर होती है। इस तुक का भाव यह है कि अगर गुरु जी ऐसी करामात कर सकते।
28. श्राद्ध –मर गये पुरखों को अर्पण किये गये पूड़े आदि।